TIGHT BINDING BOOK

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_176520
UNIVERSAL
LIBRARY

कांग्रेस का इतिहास

सन् १६३५ से १६३६ तक

प्रस्तावना लेखक

डॉ॰ पट्टाभिसीतारामैया

¶मुझे आशा है कि दिसम्बर १९३५ के बाद की घटनाओं का यह इतिहास मूल पुस्तक की लोकप्रियता को बहुत बढ़ादेगा, जिसे मैंने आज से साढ़े तीन साल पहले स्वर्णजयंती समारोह के अवसर पर तुच्छ भेट के रूप में लिखा था :

—पट्टाभिसीतारामैया

सस्ता साहित्य मण्डल

दिल्ली :: लखनऊ

आठ आना

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H 329.9/V65K Accession No. G.H. 1853

Author विद्यालंकार, कृष्णचंद्र।

Title कांग्रेस का इतिहास। 1939

This book should be returned on or before the date last marked below.

प्रकाशक

मार्तण्ड उपाध्याय, मंत्री,

सस्ता साहित्य मण्डल, दिल्ली

संस्करण

मार्च १९३९ : ५००

मई १९३९ : १५००

मूल्य

पाँच आना

मुद्रक

एस. एन. भारती

हिन्दुस्तान टाइम्स प्रेस

नई दिल्ली।

प्रस्तावना

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि मेरी इस छोटी-सी पुस्तक के हिन्दी अनुवाद का तीसरा संस्करण निकल गया है। इससे यह भी मालूम होता है कि हमारे देश के हिन्दुस्तानी जाननेवाले लोगों में ज्ञान प्राप्त करने की कितनी ज्यादा अभिलाषा है। जनता तक यह तीसरा संस्करण पहुँचाते हुए यह स्वाभाविक ही था 'कांग्रेस का इतिहास' 'अपटूडेट' यानी आजतक की घटनाओं से पूर्ण कर दिया जाता। और खुशी की बात है कि साहसी प्रकाशकों ने यह काम कर दिया है। इस परिशिष्ट भाग के लेखक मेरे मित्र श्री कृष्णचन्द्र विद्यालंकार सम्पादक व लेखक के नाते काफ़ी प्रसिद्ध हैं और पाठकों के सामने मुझे उनकी तारीफ़ करने की ज़रूरत नहीं जान पड़ती। घटना-क्रम बड़ी तेज़ी से बदल रहा है। उसके साथ-साथ कांग्रेस का क्षेत्र भी इस जल्दी से बढ़ रहा है कि इन महान् संस्था ने रियासती जनता के अधिकारों व स्वतंत्रताओं तक अपना कार्यक्षेत्र बढ़ा लिया है। इस तरह कांग्रेस सच्चे अर्थों में अब **अखिल भारतीय राष्ट्रीय महासभा** बन गई है। मुझे आशा है कि दिसम्बर १९३५ के बाद की घटनाओं का यह इतिहास मूल पुस्तक की लोकप्रियता को बहुत बढ़ा देगा, जिसे मैंने आज से साढ़े तीन साल पहले स्वर्णजयन्ती-समारोह के अवसर पर तुच्छ भेंट के रूप में लिखा था।

दिल्ली, किंग्सवे
१४ फरवरी १९३९

—बी० पट्टाभिसीतारमैया

दो शब्द

जब कांग्रेस की स्वर्णजयन्ती मनाई गई थी तब वह महज एक पूर्णस्वराज के लिए लड़नेवाली संस्था थी। अब वह एक शासक संस्था बनगई है और आधे से ज्यादा हिन्दुस्तान में कांग्रेसी मंत्रिमण्डल बना हुआ है जिनके घरों पर तिरंगा झण्डा अपनी शान के साथ फहरा रहा है। इससे कांग्रेस के ऊपर जहाँ एक नई जिम्मेदारी आई, तहाँ उसे नया अनुभव भी होरहा है और नई कठिनाइयाँ भी सामने आरही हैं—मंत्रिमण्डल के सामने भी और कांग्रेस-संगठन के सामने भी। इससे कांग्रेस की शक्ति, साधन, अनुभव, प्रभाव सब दिशाओं में वृद्धि ही हुई है और वह पहले से कहीं अधिक पूर्ण-स्वराज्य के नजदीक पहुँच रही है। इसलिए इन पिछले ३–४ साल का कांग्रेस का इतिहास लिखना मामूली बात नहीं है और न यह इतिहास कांग्रेस के सूक्ष्म अन्तःप्रवाह एवं तमाम प्रकट परिवर्तनों और प्रभावों—आघात-प्रत्याघातों—का विस्तृत या शास्त्रीय इतिहास ही है। यह तो घटनाक्रम का एक शृंखलाबद्ध वर्णन है, जो सफल और सुबोध भाषा में लिखा गया है। इससे पाठकों को आजतक की कांग्रेस-संस्था के स्थूल चित्र-दर्शन में बहुत सुविधा होगी। इसमें मुझे कोई सन्देह नहीं है।

जयपुर-सत्याग्रह-कार्यालय
आगरा

हरिभाऊ उपाध्याय

विषय-सूची

१. लखनऊ-कांग्रेस—

स्वर्ण-जयन्ती—राष्ट्रपति का दौरा—देश की क्षति—दमन-क़ानून—समाजवादी दल—लखनऊ-कांग्रेस—नागरिक-स्वाधीनता-संघ—वैदेशिक और आर्थिक विभाग—केन्द्रीय असेम्बली में काँग्रेस पार्टी—राष्ट्रपति का दौरा—नई विचार-धारा—अनुशासन की प्रवृत्ति—चुनाव का घोषणा-पत्र—३—१७

२. देश में नये युग की शुरूआत—

फैज़पुर-कांग्रेस—चुनाव संग्राम—पदग्रहण की समस्या—कनवेन्शन—वैधानिक संकट—कांग्रेसी सरकारें—अण्डमान के कैदी—जंज़ीबार की लौंग-समस्या—गाँधी-वायसराय मुलाक़ात—केन्द्रीय असेम्बली में—कलकत्ते में अ० भा० कांग्रेस कमेटी—कांग्रेसी सरकारों का शासन—१८—३३

३. हरिपुरा-कांग्रेस और उसके बाद—

वैधानिक-संकट—मुस्लिमलीग से चर्चा—हरिपुरा-कांग्रेस—संकट समाप्त—खरे-प्रकरण—नागरिक स्वाधीनता का दुरुपयोग—वर्किंग कमेटी के महत्त्वपूर्ण निर्णय—१९३८ की केन्द्रीय असेम्बली—रियासतों की अपूर्व जागृति—उड़ीसा की दुर्घटना—सेठ जमनालाल बजाज पर पाबन्दी—रियासतों में शासन सुधार—मुस्लिमलीग से चर्चा भंग—राष्ट्र का पुनर्निर्माण—अन्य प्रगतियां—३४–५३

४. गांधीजी का अनशन व त्रिपुरी-काँग्रेस—

राष्ट्रपति चुनाव का संकट—गांधीजी का आमरण अनशन—राजकोट के ठाकुर को अल्टीमेटम—आमरण अनशन प्रारम्भ—वायसराय ने हल ढूँढ निकाला—अनशन समाप्त—त्रिपुरी में विषम परिस्थिति—राष्ट्रपति की बीमारी—आन्तरिक मतभेद—पन्तजी का प्रस्ताव—राष्ट्रपति का भाषण—दुःखपूर्ण दृश्य—राष्ट्रीय माँग—अन्य प्रस्ताव—गांधीजी के नेतृत्व की विजय—आंतरिक संकट जारी—राजकोट का महत्त्वपूर्ण निर्णय—रियासतों में सत्याग्रह स्थगित—राष्ट्रपति का त्यागपत्र—५४–७६

कांग्रेस का इतिहास

[परिशिष्ट भाग]

—सन् १९३५ से मार्च १९३९ तक—

: १ :

लखनऊ कांग्रेस

स्वर्ण-जयन्ती

सन् १९३५ की सबसे अन्तिम घटना थी काँग्रेस की स्वर्ण-जयन्ती। इसी मौक़े के लिए डा० पट्टाभि सीतारमैया ने काँग्रेस का वह इतिहास लिखा, जो पिछले पृष्ठों में पाठकों ने पढ़ा है। मूल इतिहास तो अंग्रेज़ी में लिखा गया था, लेकिन हिन्दी, गुजराती, मराठी, उर्दू, तैमिल और तेलगू आदि अनेक प्रान्तीय भाषाओं में इसके उलथे प्रकाशित हुए। काँग्रेस कमेटी के दफ्तर ने राष्ट्रीय समस्याओं पर छोटी-छोटी पुस्तिकायें भी इस अवसर पर प्रकाशित कीं। बहुत-सी प्रान्तीय या ज़िला काँग्रेस कमेटियों ने भी अपने-अपने क्षेत्र के राष्ट्रीय आन्दोलन के संक्षिप्त इतिहास प्रकाशित किये। स्वर्ण-जयन्ती मनाने का फ़ैसला बहुत देर बाद किया गया था, फिर भी सारे देश ने इस उत्सव को बड़ी धूमधाम व उत्साह से मनाया। बहुत-से शहरों में भारत की सबसे बड़ी और सच्ची प्रतिनिधि संस्था के सैकड़ों आपत्तियों में से गुज़रने और ५० साल पहले बोये गये एक छोटे-से बीज से बढ़कर विशाल बटवृक्ष होने की खुशी में दीवाली मनाई गई। बम्बई, कराची, हैदराबाद, नागपुर, गोहाटी, मुजफ्फरनगर और लखनऊ आदि शहरों में ग्रामोद्योग-प्रदर्शिनियों और मेले के आयोजन द्वारा साधारण जनता ने राष्ट्रीय महासभा की खुशी में भाग लिया। बहुत-से नगरों, क़स्बों और गाँवों में खेल-कूद, कवि-सम्मेलन, मुशायरे व संगीत-सम्मेलन वग़ैरा किये गये। कुछ शहरों में भारत की प्राचीन विधि के अनुसार ग़रीब लोगोंको भोजन तथा वस्त्र दान दिये गये। अंग्रेज़ी और प्रान्तीय भाषाओं के ज्यादातर दैनिक, साप्ताहिक और मासिक पत्रों ने इस अवसर पर छोटे-बड़े विशेषांक निकालकर समस्त राष्ट्र में नवजीवन का संचार कर देनेवाली राष्ट्रीय महासभा को श्रद्धांजलि अर्पित की। बहुत-से शहरों की म्यूनिसिपैलिटियों ने भी इस राष्ट्रीय समारोह में भाग लिया। सैकड़ों सार्वजनिक संस्थाओं ने देश की सबसे बड़ी सार्वजनिक संस्था को बड़ी शान के साथ ५० साल पूरे करने पर बधाई दी।

राष्ट्रपति राजेन्द्र बाबू उन दिनों बम्बई में थे और बम्बई में ही काँग्रेस का प्रथम अधिवेशन हुआ था। गोकुलदास तेजपाल पाठशाला, जहाँकि पहला अधिवेशन

हुआ था, इस समारोह का केन्द्र होगया। राष्ट्रपति ने २७ दिसम्बर को सर दीनशा वाचा के, जो काँग्रेस के पुराने जीवित सभापतियों में सबसे अधिक वयोवृद्ध थे, घर जाकर उनके दर्शन किये और उन्हें प्रणाम किया। इसके दूसरे दिन २८ ता० को सारे देश ने इस राष्ट्रीय समारोह को अभूतपूर्व तौर पर मनाया। प्रभातफेरी, झंडाभिवादन, जलूस और विराट् सभायें दिन-भर का कार्यक्रम था। बाजारों की दुकानों, लोगों के अपने घरों, तांगों और मोटरों व साइकलों पर राष्ट्रीय तिरंगे झण्डे फहराये गये। राष्ट्र के नेताओं ने इस अवसर पर सन्देश दिये। विदेशों से भारत-हितैषियों ने भी सन्देश भेजकर काँग्रेस की सफलता पर हार्दिक प्रसन्नता प्रकट की और बधाई दी। राष्ट्रपति राजेन्द्रबाबू का सन्देश तमाम मुल्क में पढ़ा गया। इसके कुछ अंश ये हैं:—

"५० साल पहले आज के दिन बम्बई में थोड़े-से प्रतिनिधियों ने इस सभा की स्थापना की थी। वे लोग जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि तो शायद ही कहे जा सकें, लेकिन वे थे भारतीय जनता के सच्चे सेवक। इस काँग्रेस का एक निश्चित ध्येय था—जनता की स्वतंत्रता। स्वतंत्रता का अर्थ पहले निश्चित न था, लेकिन आज इसका अर्थ निश्चित होगया है। इसका अर्थ है पूर्ण स्वराज्य या मुकम्मिल आज़ादी। इसक अर्थ है भारतीय जनता द्वारा चुने गये प्रतिनिधियों का सरकारी मशीनरी पर नियंत्रण। इसका अर्थ एक श्रेणी या एक जाति की स्वतन्त्रता नहीं, इसका अर्थ है स हिन्दुस्तानियों—ग़रीब-से-गरीब हिन्दुस्तानी के लिए स्वतंत्रता। जनता के आर्थि शोषण का अन्त करने के लिए राजनैतिक स्वतंत्रता में सच्ची आर्थिक स्वतन्त्रता भ मिली होनी चाहिए।

"स्वराज्य-प्राप्ति के साधन भी निश्चित हो चुके हैं। वे उचित और शान्ति मय होने चाहिएँ।······

"काँग्रेस का प्रारम्भ बहुत छोटे रूप में हुआ था, लेकिन आज भारत की स सबसे बड़ी राजनैतिक संस्था बन गई है। यह समस्त देश की—सभी भारतीयों प्रतिनिधि संस्था है। इसकी शाखायें सारे मुल्क में—उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षि के अंतिम सिरे कन्याकुमारी तक फैल गई हैं। इसका वर्त्तमान कार्यक्रम बहुत विस और विशाल है। असेम्बली की सदस्यता, चरखा, खद्दर तथा अन्य ग्रामोद्योगों उन्नति, ग्रामों के आर्थिक, सामाजिक, शिक्षासम्बन्धी जीवन में विकास, अस्पृश्य निवारण, साम्प्रदायिक एकता, पूर्ण मद्यनिषेध, राष्ट्रीय शिक्षा, वयस्कों में शि प्रचार, किसान-संगठन, मज़दूर-संगठन, और घरेलू धन्धों द्वारा किसानों की आ सहायता—ये सब कार्यक्रम काँग्रेस ने अपना लिये हैं। इस तरह राष्ट्रीय जीवन हरेक पहलू काँग्रेस के क्षेत्र में है।·········

"आइए, आज हम उन सब ज्ञात या अज्ञात स्त्री, पुरुष और बच्चों के

अपना सिर झुकायें, जिन्होंने भारत की आज़ादी के लिए अपनी जान तक कुरबान कर दी है, तरह-तरह के कष्ट और अत्याचार सहे हैं और जो आज भी अपनी मातृ-भूमि को प्यार करने के कारण कष्ट पा रहे हैं। उन लोगों की सेवाओं का भी हमें कृतज्ञता व सम्मान के साथ स्मरण करना चाहिए, जिन लोगों ने इस महान् संस्था का बीज बोया और अपने निःस्वार्थ परिश्रम व बलिदान से इसका पोषण किया।"

भारत के कोने-कोने में, पूर्व-पश्चिम और उत्तर-दक्षिण, सभी दिशाओं में, इस दिन जो शानदार समारोह किया गया, उससे एक बार यह फिर साफ़ हो गया कि कांग्रेस सारे देश की—छोटे-बड़े, बालक-बूढ़े, स्त्री या पुरुष सबकी—हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, सिक्ख, पारसी और व्यापारी, व्यवसायी, वकील, डाक्टर, दुकानदार, किसान, मज़दूर आदि सभी श्रेणियों की प्रतिनिधि संस्था है और उसपर सबको विश्वास है। कुछ महाराष्ट्रीय युवकों ने तेजपाल संस्कृत पाठशाला में एक ज्योति जलाकर उसे अखण्ड रखने का निश्चय किया। इसके अनुसार यह ज्योति जलाई गई और काँग्रेस के अधिवेशनों के अवसर पर भी पहुँचाई गई।

यहाँ यह बताना अप्रासांगिक न होगा कि सरकार ने इस राष्ट्रीय समारोह में साधारणतः किसी प्रकार की दस्तंदाज़ी नहीं की, फिर भी कुछ स्थानों पर स्थानीय अधिकारियों ने रुकावट डाली।

राष्ट्रपति का दौरा

बम्बई की काँग्रेस १९३४ के अक्तूबर में हुई थी। उसका अगला अधिवेशन लखनऊ में अप्रैल १९३६ में हुआ। राष्ट्रपति राजेन्द्रप्रसाद का कार्यकाल इस तरह १॥ साल तक रहा। इन १८ महीनों में राजेन्द्र बाबू ने बहुत अस्वस्थ होते हुए भी जिस उत्साह, जिस लगन और कर्तव्यपालन की जिस भावना के साथ काम किया, वह काँग्रेस के इस समय तक के इतिहास में अद्वितीय है। बिहार में भूकम्प-पीड़ितों की सहायता का जो बड़ा भारी काम चल रहा था, उसका भार भी उन्हींके कन्धों पर था। इतनी बड़ी और कठिन ज़िम्मेदारी होते हुए उन्होंने राष्ट्रपति के नाते महाराष्ट्र, कर्नाटक, बरार, पंजाब, तामिलनाड, आँध्र, केरल और महाकोशल आदि प्रांतों का दौरा किया। राष्ट्रपति का दौरा अप्रैल १९३५ से शुरू हुआ और फरवरी १९३६ में जाकर समाप्त हुआ। चौमासे में उनका दौरा स्थगित रहा। इस दौरे में उनका सभी जगह शानदार स्वागत हुआ। काँग्रेस कमेटियों के अलावा म्यूनिसिपैलिटियों, लोकल बोर्डों, पंचायतों, व्यापारिक संस्थाओं और दूसरी सार्वजनिक संस्थाओं ने उन्हें मानपत्र दिये। अक्सर सभी स्थानों म उन्हें थैलियाँ भी भेंट की गई। कुल मिलाकर सब प्रान्तों में उन्हें ८९२९७ रु०१० आ० ५ पाई मिला। इसमें से महाराष्ट्र,

तामिलनाड, आंध्र और केरल प्रान्तों से उन्हें क्रमशः २४९५०) रु०, २०४२१) रु०, ३५०७७) रु० और ४२०५) रु० मिले। निश्चित उद्देश्य से दी गई रकमों के सिवा बाकी रुपये का आठवाँ भाग अ० भा० कां० कमेटी ने लिया और शेष प्रान्तों को वापस कर दिया गया। इस दौरे में हज़ारों मील मोटर से और हज़ारों मील रेल-गाड़ी से उन्होंने सफ़र किया। इस दौरे की सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि यह दौरा केवल बड़े-बड़े शहरों तक सीमित न था। प्रान्तों के अन्तर्वर्ती गाँवों और कसबों में जाकर राष्ट्रपति ने किसान-किसान तक राष्ट्र का स्फूर्तिदायक संदेश सुनाया। राष्ट्रपति को भेंट में मिली थैलियाँ इस बात का प्रमाण हैं कि उनका संदेश किस तरह भारत के सच्चे नागरिक दरिद्र किसानों तक पहुँचा। इन थैलियों में किसानों ने एक-एक पैसा जमा करके दिया था और कई थैलियाँ तो सैंकड़ों रुपयों के पैसों से भरी हुई मिलीं। वस्तुतः पूँजीपतियों की बड़ी रकमों की अपेक्षा ये पैसे-पैसे की रक़में ज्यादा क़ीमती हैं।

१ जनवरी १९३६ को बम्बई में वर्किंग-कमिटी की बैठक हुई, जिसमें लखनऊ-काँग्रेस का कार्यक्रम नियत किया गया और बंगाल के कांग्रेसियों के पुराने झगड़े को समाप्त करने के लिए राष्ट्रपति को अधिकार दिये गये। राष्ट्रपति को यह भी अधिकार दिया गया कि जबतक बंगाल प्रान्तीय काँग्रेस का बाकायदा चुनाव न हो जाय, तबतक के लिए वह श्री शरतचन्द्र बोस के परामर्श से कमिटी के सदस्यों और अधिकारियों को मनोनीत करलें। एक और प्रस्ताव द्वारा उन लोगों को काँग्रेस-कमेटियों के सदस्य बनने और चुनाव में भाग लेने की छूट दी गई, जो जेल में कैद रहने, नजरबन्द होने या भारत से सरकार की आज्ञा द्वारा निर्वासित रहने के कारण छः मास पहले काँग्रेस के सदस्य न बन सके हों या इन कारणों से शारीरिक श्रम न कर सके हों।

देश की क्षति

लखनऊ-काँग्रेस की चर्चा करने से पहले इस समय तक की कुछ और घटनाओं का ज़िक्र करलें। श्री शशमल, श्री अभ्यंकर और श्री तसद्दुक़ अहमद खाँ शेरवानी के, जो केन्द्रीय असेम्बली के चुनाव में सफल हो चुके थे, देहान्त का ज़िक्र पहले किया जा चुका है। इनके अलावा भी कई महान् व्यक्ति देश से छिन गये। सिन्ध के प्रसिद्ध विद्वान् और नेता आचार्य गिडवानी, दिल्ली के अनथक कार्यकर्ता श्री आरिफ़ हस्वी, बिहार के प्रसिद्ध दानी श्री दीपनारायण सिंह जो असेम्बली के चुनाव में सफल हुए थे, इंग्लैण्ड में भारत की ओर से आन्दोलन करनेवाले सर शापुरजी सकलातवाला, आसाम के काँग्रेस-आन्दोलन के प्राण श्री नवीनचन्द्र बारडोलाई और

बम्बई के सर दीनशा वाचा, जिनके चरणों में जाकर कुछ ही दिन पहले राष्ट्रपति राजेन्द्र बाबू ने प्रणाम किया था, लखनऊ-काँग्रेस से पहले ही चल बसे। एक और व्यक्ति के देहान्त ने भी सारे देश को शोकसागर में डुबो दिया। यह व्यक्ति थी पं० जवाहरलाल नेहरू की पत्नी श्रीमती कमला नेहरू। उन्होंने अपने लगातार गिरते हुए स्वास्थ्य की चिन्ता न करके देश के लिए हर क़िस्म की कुरबानी की। भारतीय स्त्रियों को राजनैतिक क्षेत्र में लाने में उनका काफ़ी बड़ा हाथ था। वह योग्य पति की योग्य पत्नी थीं। जेल-प्रवास के बाद से ही वह बीमार चली आरही थीं और विदेशों में चिकित्सा के जो भी सर्वोत्तम साधन प्राप्त हो सकते हैं उनके बावजूद वह बच न सकीं। समस्त राष्ट्र ने इस अवसर पर पं० जवाहरलाल नेहरू से सहानुभूति प्रकट की।

दमन क़ानून

१८ दिसम्बर १९३५ को वाइसराय ने एक घोषणा द्वारा क्रिमिनल ला अमेण्डमेण्ट एक्ट को सम्पूर्ण ब्रिटिश भारत में लागू कर दिया। इस बिल को सितम्बर में असेम्बली ने रद कर दिया था। १९ नवम्बर को युक्तप्रान्तीय कौंसिल ने स्पेशल पावर्स एक्ट पास किया। इसका आधार यह बताया गया था कि संयुक्तप्रांत में सोशलिस्टों की जबरदस्त पार्टी है, जो जमींदारी प्रथा का ख़ातमा करना चाहती है। इसी आशय का एक बिल पंजाब-कौंसिल ने भी १८ नवम्बर को पास किया। दिल्ली-सरकार ने एक सूचना निकालकर पंजाब क्रिमिनल ला अमेण्डमेण्ट एक्ट को दिल्ली में भी जारी कर दिया। इन क़ानूनों के द्वारा सरकार ने प्रजा के आन्दोलन का दमन करने के लिए वे सब अधिकार अपने हाथ में कायम रक्खे, जो आर्डिनेंस राज के समय से चले आते थे।

समाजवादी दल

दिसम्बर १९३५ में अखिल-भारतीय सम्मिलित मज़दूर बोर्ड ने यह अनुभव किया कि मज़दूरों की समस्या का हल करने के लिए काँग्रेस का सहयोग अनिवार्य है और इसलिए बोर्ड ने नागपुर में काँग्रेस की मजदूर-समिति से बातचीत करने का निश्चय किया। समाजवादी दल का निर्माण तो पहले ही हो चुका था, लेकिन उस की पहली कान्फ्रेंस श्रीमती कमलादेवी चट्टोपाध्याय के सभापतित्व में मेरठ में हुई। इस काँग्रेस में हम देखते हैं कि काँग्रेस के वाम-पक्ष के रूप में इसका काँग्रेसी नीति से विरोध और भी प्रबल हुआ। इस कान्फ्रेंस में पदग्रहण के विचार का तीव्र विरोध किया गया, नये विधान का मुक़ाबिला करने के लिए सत्याग्रह आदि प्रत्यक्ष युद्ध करने

की सलाह दी गई, काँग्रेस-विधान में अधिकारियों के लिए श्रम-मताधिकार तथा खद्दर की अनिवार्यता का विरोध किया गया, काकोरी के भूख-हड़ताली क़ैदी जोगेश चटर्जी की, जिन्होंने १११दिन तक भूख-हड़ताल की थी, सहानुभूति में दिन मनाने का निश्चय किया गया और किसानों-मज़दूरों की ओर से कुछ माँगे पेश की गई। समाजवादी दल धीरे-धीरे बल पकड़ता जारहा था और इस तरह काँग्रेस में ही रहते हुए काँग्रेस-अधिकारियों की नीति से असंतोष कुछ कुछ उग्र-रूप धारण कर रहा था।

लखनऊ कांग्रेस

लखनऊ-काँग्रेस में समाजवादी काफ़ी ज़ोर के साथ आये दीखते थे, लेकिन उनके तेज-तर्रार भाषणों के अनुकूल विशेष सफलता उन्हें नहीं मिली। कुछ लोग संदेह करने लगे थे कि लखनऊ-काँग्रेस में ही काँग्रेस के दक्षिण व वाम पक्षों का विरोध अधिक न बढ़ जाय, लेकिन पं० जवाहरलाल नेहरू की धाक और दोनों दलों की काँग्रेस के प्रति निष्ठा के कारण ऐसी नौबत न आई। लखनऊ-काँग्रेस के सभापतित्व का सवाल पेचीदा था। इस समय दोनों दलों के बढ़ते हुए विरोध, और देश के सामने नये विधान जैसे जटिल व विवादास्पद प्रश्नों के कारण आपस के मेल की और भी अधिक आवश्यकता थी। राष्ट्रपति के बढ़ते हुए उत्तरदायित्व को देखते हुए एक ऐसे राष्ट्रपति की ज़रूरत महसूस की जारही थी, जिसका प्रभाव सारे देश पर हो, जिसपर दोनों दलों को विश्बास हो और जो साहस व दृढ़ता के साथ देश का नेतृत्व कर सके। इस दृष्टि से पं०जवाहरलाल नेहरू पर सबकी नज़र पड़ी। उनपर दोनों दलों को विश्वास था और शेष आवश्यक गुणों की भी उनमें कमी न थी। इसलिए जिस सूबे में काँग्रेस हो रही हो, उससे दूसरे सूबे का सभापति चुनने की प्रथा को पहली बार तोड़कर भी उन्हें ही राष्ट्रपति का पद दिया गया। लखनऊ-काँग्रेस से पहले स्वागत-समिति के स्थानीय काँग्रेसी कार्य-कर्ताओं के पारस्परिक मतभेद से कुछ नाज़ुक हालत पैदा होगई थी, लेकिन पं० जवाहरलाल नेहरू के हस्तक्षेप से मामला सुलझ गया। बम्बई के अधिवेशन में काँग्रेस के परिवर्तित विधान के अनुसार प्रतिनिधियों की संख्या कम करदी गई थी, इसलिए इस वर्ष प्रायः सभी प्रान्तों में प्रतिनिधियों के चुनाव में काँग्रेसियों में काफ़ी कशमकश रही, जो प्रायः प्रतिवर्ष बढ़ती जाती है।

पुरानी सब प्रथाओं को तोड़कर लखनऊ-काँग्रेस के सभापति पं० जवाहरलाल नेहरू का जलूस पैदल निकालने का निश्चय किया गया था। वह कुछ मिनट पैदल भी चले, लेकिन भीड़ के कारण यह सम्भव न हो सका और उन्हें घोड़े पर सवार होजाना पड़ा। १२ अप्रैल को काँग्रेस का अधिवेशन प्रारम्भ हुआ। स्वागताध्यक्ष

बाबू श्रीप्रकाश के भाषण के बाद राष्ट्रपति का हिन्दुस्तानी में भाषण हुआ। इसमें प्रायः सभी सामयिक समस्यायों पर उन्होंने अपने विचार दृढ़ता से प्रकट किये।

लखनऊ-काँग्रेस में कुल १५ प्रस्ताव पास हुए। पहला प्रस्ताव हस्बमामूल शोक-प्रस्ताव था, जिसमें उपर्युक्त दिवंगत व्यक्तियों के सिवा सर्वश्री मोहनलाल पंड्या, सेठ नथमल चोरडिया, गणपतराव टिकेकर, टी० वी० वेंकटराय, आगा मुहम्मद सफ़दर और महादेवप्रसाद सेठ की मृत्यु का भी उल्लेख था। दूसरे प्रस्ताव में विविध सरकारी क़ानूनों के शिकार देशभक्त क़ैदियों, निर्वासितों और नज़रबन्दों को बधाई दी गई और सीमाप्रान्त व बंगाल के उन लोगों से, जो कड़े क़ानूनों के शिकार थे, हार्दिक सहानुभूति प्रकट की गई। तीसरे प्रस्ताव में देश-निर्वासन के लम्बे काल के बाद आते हुए श्री सुभाषचन्द्र की गिरफ्तारी पर रोष प्रकट करके उन्हें साधुवाद और सहानुभूति का संदेश दिया गया। बाक़ी प्रस्तावों द्वारा नागरिक अधिकारों के अपहरण की निन्दा की गई; प्रवासी भारतीयों तथा अन्य देशों की राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय और मज़दूर आदि संस्थाओं से सम्पर्क रखने के लिए काँग्रेस कमेटी का एक वैदेशिक विभाग खोलने का निश्चय किया गया; विश्व-शान्तिपरिषद् के निमन्त्रण के लिए श्री रोमां रोलाँ को बधाई दी गई और उक्त परिषद् से सहानुभूति प्रकट की गई; साम्राज्यवादी युद्ध में भारत के भाग न लेने की घोषणा की गई, अबीसीनिया से सहानुभूति तथा राष्ट्रसंघ की नपुंसकता की निन्दा की गई; कांग्रेस के विधान में कुछ परिवर्तन किये गये, रियासती प्रजा के लिए जनतन्त्रात्मक स्वतन्त्रता के अधिकार की घोषणा की गई और काँग्रेस का आगामी अधिवेशन महाराष्ट्र में करने का निश्चय किया गया। इनके अलावा कुछ और भी मुख्य प्रश्न थे। उनपर समाजवादियों ने वर्किंग कमेटी के मूल प्रस्तावों का तीव्र विरोध किया, लेकिन उन्हें सफलता न मिली। भावी शासन-विधान और उसमें पदग्रहण करने न करने का प्रश्न सबसे महत्त्वपूर्ण था। इस प्रस्ताव पर सबसे अधिक बहस हुई, और कई संशोधन पेश हुए, लेकिन अन्त में मूल प्रस्ताव ही बहुत अधिक मत से पास हो गया। इसके अनुसार नया शासन-विधान अस्वीकृत किया गया, कंस्टिट्युएण्ट असेम्बली की माँग की गई, पार्लमेण्टरी बोर्ड तोड़कर सब अधिकार वर्किंग कमेटी को दे दिये गये। नये विधान के अनुसार प्रान्तीय कौंसिलों का चुनाव लड़ने का निश्चय किया गया और पदग्रहण का विवादपूर्ण प्रश्न समय आने पर अखिल-भारतीय काँग्रेस कमेटी के निर्णय के लिए स्थगित किया गया। देश की साधारण जनता से सम्पर्क बढ़ाने के उपायों पर विचार करने के लिए बाबू राजेन्द्रप्रसाद, श्री जयरामदास दौलतराम और श्री जयप्रकाश नारायण की एक उपसमिति नियत की गई। इसपर भी बहस हुई। काँग्रेस में किसान और मज़दूर सभाओं के प्रत्यक्ष प्रति-

निधित्व का संशोधन पास न हो सका। किसानों के सम्बन्ध में एक अखिल भारतीय कार्यक्रम बनाने के लिए सब प्रान्तीय काँग्रेस-कमेटियों के पास एक प्रश्नावली भेजकर सिफ़ारिशें माँगने का प्रस्ताव भी लखनऊ-काँग्रेस का एक महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव था। इस प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस ने किसानों की बहुत-सी माँगों को स्वीकार कर लिया। इसके अनुसार सब प्रान्तीय काँग्रेस-कमेटियाँ किसानों की स्थिति का विस्तृत अध्ययन करने लगीं, जिनका लाभ आज ख़ूब उठाया जा रहा है, जबकि विभिन्न प्रान्तों में काँग्रेसी सरकारों को किसानों-सम्बन्धी क़ानून बनाने पड़ रहे हैं। विश्व-शान्तिपरिषद् में श्री कृष्णन मेनन को कांग्रेस के प्रतिनिधि के तौर पर भेजा गया।

नागरिक स्वाधीनता संघ

लखनऊ-काँग्रेस के प्रस्तावों पर तुरन्त ही अमल किया गया। पं० जवाहरलाल नेहरू ने कविवर रवीन्द्रनाथ ठाकुर के सभापतित्व में नागरिक स्वाधीनता संघ (सिविल लिबर्टी यूनियन) की स्थापना की। इसमें उन्हें भिन्न-भिन्न राजनैतिक दलों और विचारों के १५० प्रतिष्ठित नेताओं का सहयोग प्राप्त होगया। यह संघ अबतक उत्साह से काम कर रहा है। यह संघ ब्रिटिश भारत व रियासतों में नागरिक अधिकार-अपहरण की तथा राजनैतिक क़ैदियों के साथ दुर्व्यवहार की पूरी जानकारी रखता और प्रकाशित करता है। अन्य देशों की नागरिक अधिकार-संरक्षक संस्थाओं से भी यह संघ पूरा सम्पर्क क़ायम रक्खे हुए है।

वैदेशिक और आर्थिक विभाग

वैदेशिक विभाग भी डॉ० राममनोहर लोहिया के चार्ज में खोल दिया गया। शुरू में वैदेशिक विभाग के कुछ बुलेटिन पुलिस उठा ले गई, क्योंकि ज़िला-मजिस्ट्रेट की राय में ये भी अख़बार की परिभाषा में आते थे। बाद में बाकायदा इजाज़त लेकर बुलेटिन छपाये जाने लगे। यह विभाग जहाँ विदेशों की भिन्न-भिन्न संस्थाओं और पत्रों को भारतीय स्थिति का प्रामाणिक परिचय देता है, वहाँ अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की घटनाओं से भारत की जनता को भी परिचित रखता है। विभिन्न देशों के स्वाधीनता-आन्दोलनों और जन-आन्दोलनों से पूरा सम्पर्क रखने का यह विभाग प्रयत्न करता है। राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू ने अपने सभापति-काल के दो वर्षों में भारत को अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति से सम्बद्ध रखने की आवश्यकता पर बहुत जोर दिया है और उसका आज यह परिणाम हुआ है कि भारत की आम शिक्षित जनता भी अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में दिलचस्पी लेने लगी है और उससे लाभ उठाने की चर्चा करने लगी है। वैदेशिक विभाग के अलावा डॉ० अशरफ़ के नेतृत्व में राजनैतिक व

आर्थिक विभाग भी काँग्रेस-कार्यालय में क़ायम किया गया, जिसका काम भारत की राजनैतिक व आर्थिक समस्याओं का अध्ययन, आंकड़ों का संग्रह और लेखों, पैम्फलेटों व पुस्तकों का प्रकाशन है।

केन्द्रीय असेम्बली में काँग्रेसपार्टी

काँग्रेस के प्रस्ताव के अनुसार पार्लमेण्टरी बोर्ड तोड़ दिया गया। प्रान्तीय कौंसिलों का चुनाव करने के लिए वर्किंग कमेटी ने एक पार्लमेण्टरी कमेटी की नियुक्ति की। इसके अध्यक्ष सरदार वल्लभभाई पटेल तथा मंत्री श्री राजेन्द्रप्रसाद और श्री गोविन्दवल्लभ पन्त चुने गये। उम्मीदवारों का अन्तिम निर्णय करने के लिए एक कार्यकारिणी समिति नियुक्त की गई। प्रान्तों में पार्लमेण्टरी कार्यों के लिए प्रान्तीय पार्लमेण्टरी बोर्ड बनाये गये। काँग्रेस ने चुनावों में शानदार फ़तह कैसे हासिल की, इसकी चर्चा हम आगे करेंगे। यहाँ केन्द्रीय असेम्बली में काँग्रेसपार्टी के कार्यों पर एक नज़र डाल लेना काफ़ी होगा। असेम्बली के शरत्कालीन अधिवेशन में काँग्रेसी सदस्यों ने कई प्रश्नों पर विचार करने के लिए बहुत-से स्थगित प्रस्ताव पेश किये। बहुत-से प्रस्ताव गवर्नर-जनरल ने पेश होने से ही रोक दिये और जब वायसराय के इस रुख़ पर स्थगित प्रस्ताव पेश किया गया तो अध्यक्ष सर अब्दुर्रहीम ने यह कह कर उसकी इजाज़त न दी कि असेम्बली वायसराय के कुछ कार्यों पर बहस नहीं कर-सकती। इण्डियन सिविल सर्विस में गोरों की भरती को तरजीह देने की निन्दा का स्थगित प्रस्ताव पास हो गया। वायसराय के भाषण के अवसर पर काँग्रेसी ग़ैरहाज़िर रहे। जब अध्यक्ष ने तटकरनीति की निन्दा के ख़िलाफ़ स्थगित प्रस्ताव पर अन्तिम समय अर्थसदस्य को बोलने की इजाज़त दी, तो काँग्रेसी सदस्यों ने इसके विरोध में वाक-आउट कर दिया। किसानों की आर्थिक अवस्था की जाँच करने के लिए कमेटी नियुक्त करने का प्रस्ताव पास हो गया। इण्डियन कम्पनी एक्ट अमेण्डमेण्ट बिल के अन्तिम रूप को बनाने में काँग्रेसी सदस्यों ने खूब भाग लिया। इससे पहले के बजट अधिवेशन में भी काँग्रेसी सदस्यों ने खूब हलचल मचा दी थी। सैकड़ों प्रश्नों और स्थगित प्रस्तावों द्वारा सरकारी नीति की आलोचना की गई। असेम्बली और कौंसिल आफ़ स्टेट के सदस्यों की एक सम्मिलित सेना-समिति नियुक्त करने और ब्रिटिश भारत के सब भागों में शासनविधान का प्रतिनिधितन्त्र-विधान चालू करने के प्रस्ताव पास किये गये। रेलवे की आर्थिक नीति की निन्दा पर कटौती-प्रस्ताव पास होगया। फ़ौज का सप्लाई ख़र्च सिर्फ़ एक रुपया रखने का कटौती प्रस्ताव भी असेम्बली ने पास कर दिया। असेम्बली ने कटौती-प्रस्तावों द्वारा क्वेटा के निर्माण के लिए वार्षिक आय में से रुपया लगाने की निन्दा की, वाइसराय की कार्यकारिणी का ख़र्च पास करने से

इन्कार कर दिया, सीमाप्रान्त तथा अन्य प्रान्तों में दमननीति की निन्दा की, नमक-कर हटाने की सिफ़ारिश की, पोस्टकार्ड की क़ीमत दो पैसा कर देने की माँग की, श्री सुभाषचन्द्र को दी गई धमकी पर निन्दा का प्रस्ताव पास किया और पिछले साल की भांति वाइसराय के सिफ़ारिशी फ़ाइनेंस बिल को ठुकरा दिया। मतलब यह कि भारत के लोकमत को काँग्रेसपार्टी असेम्बली में बहुत स्पष्टता और तीव्रता के साथ रखने में काफ़ी सफल हुई।

काँग्रेस द्वारा नियुक्त मज़दूर सब-कमेटी ने देश की मज़दूर-संस्थाओं के प्रतिनिधियों से मज़दूर-समस्या के विविध पहलुओं पर चर्चा की। कमेटी ने मिलमालिकों से, काँग्रेस-कार्यकर्ताओं से और असेम्बली के सदस्यों से मज़दूरों की ओर ज्यादा ध्यान देने की अपील की। कांग्रेस कमेटियों को जगह-जगह मजदूर-संघ खोलने की सलाह भी इस कमेटी ने दी।

राष्ट्रपति का दौरा

इस वर्ष काँग्रेस ने अत्यन्त तेजस्वी, साहसी व योग्य व्यक्ति को अपना नेता चुना था। इसलिए यह असंभव था कि काँग्रेस-कार्य में प्रगति न होती। उन्होंने सबसे पहले काँग्रेस-कार्यालय के संगठन पर ज़ोर दिया। कर्मचारी बढ़ाये गये। प्रान्तीय काँग्रेस कमेटियों से सम्पर्क बढ़ाया गया। सरक्युलरों, पत्रों और वक्तव्यों द्वारा प्रान्तीय कांग्रेस कमेटियों की मार्फ़त सारे देश को समय-समय पर भावी कार्यक्रम के बारे में नेतृत्व व परामर्श दिया जाने लगा। समय-समय पर सारे देश में ख़ास-ख़ास दिवस मनाने की घोषणाओं द्वारा जनता को जागृत, सतर्क और काँग्रेस के प्रति निष्ठावान रखने की कोशिश की गई। ९ मई को अबीसीनिया-दिवस, १० मई को सुभाष-दिवस, १७ मई को डा० अंसारी दिवस, १३ सितम्बर को जतीन्द्र-दिवस, २७ सितम्बर को फिलस्तीन दिवस और ११ नवम्बर को युद्धविरोधी दिवस मनाये गए। समय-समय राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर निकले राष्ट्रपति के वक्तव्यों के कारण भी देश में काफ़ी हलचल रही। लेकिन सबसे ज्यादा हलचल रही राष्ट्रपति के दौरों से। पिछले राष्ट्रपति बा० राजेन्द्रप्रसाद ने दौरों की जो प्रथा चलाई थी, उसे पं० जवाहरलाल ने और भी अधिक उत्साह से आगे बढ़ाया। उन्होंने पंजाब, दिल्ली, बम्बई, सिंध, संयुक्तप्रान्त, बंगाल, उत्कल, तामिलनाड़, आंध्र और मध्यप्रान्त में दौरा किया। लाखों आदमियों ने उनका संदेश सुना। सिंध और पंजाब में उन्होंने २५२ और तामिनाड में २०३ सभाओं में भाषण दिये। अनुमानतः इन तीनों प्रान्तों में ४० लाख व्यक्तियों ने उनका संदेश सुना। बड़े-बड़े शहर से छोटे-छोटे गाँव तक उन्होंने राष्ट्रीयता का संदेश पहुँचाया। इन दौरों में वह प्रायः

सभी स्थानों पर सभी श्रेणियों के प्रतिनिधियों से मिले। किसान और मज़दूर, म्यूनिसिपल कमेटियों के सदस्य, विद्यार्थी, वकील और दूकानदारों आदि से मिले और सभी को उन्होंने काँग्रेस में सम्मिलित होने की सलाह दी।

नई विचारधारा

राष्ट्रपति के भाषणों और लेखों ने समस्त भारत में एक नई विचार-धारा को प्रोत्साहन दिया। उन्होंने बताया कि भारत शेष संसार से जुदा नहीं है। जो शक्तियाँ शेष संसार को चला रहीं हैं, वही भारत में काम कर रही हैं। युद्ध, साम्राज्यवाद और पूंजीवाद की प्रतिगामी शक्तियाँ अबीसीनिया, स्पेन, चीन और भारत में काम कर रही हैं। इनके विरुद्ध जनतंत्र, मज़दूर और किसानों के संगठन तथा समाजवाद की शक्तियाँ भी समस्त देशों में संघर्ष कर रही हैं। भारत का आन्दोलन भी इसी संघर्ष का एक भाग है। राष्ट्रपति ने अपने भाषणों में आर्थिक समस्याओं पर ज़ोर देते हुए समाजवादी विचार-धारा को बहुत उत्तेजना दी। उन्होंने बताया कि साम्प्रदायिक समस्या बहुत तुच्छ समस्या है। मुख्य समस्या आर्थिक है, उसका हल कर लेने पर छोटी-छोटी समस्यायें स्वयं हल हो जायँगी। एक जाति की शक्ति सरकारी नौकरियों से नहीं, लेकिन इससे पहचानी जाती है कि देश के मुक्ति-यज्ञ में उसका कितना बड़ा भाग है। देश में दो ही दल हैं, एक ओर काँग्रेस है और दूसरी ओर सरकार। सभी काँग्रेस-विरोधी दल, चाहे वे कितना ही राष्ट्रीय नाम क्यों न रक्खें, देश के राष्ट्रीय संग्राम में रुकावट डालते हैं, फलतः वे सरकार के साथ हैं। राष्ट्रपति के इन संदेशों का सचमुच बहुत असर हुआ। साधारण शिक्षित जनता इस नई विचार-धारा को अपनाने लगी, अंग्रेज़ी और देशी भाषाओं के पत्र इन विषयों पर खूब चर्चा करने लगे। इसी प्रसंग में यह कह देना भी उचित होगा कि राष्ट्रपति समाजवादी दृष्टि से उग्र विचार रखते हुए भी कभी उन समाजवादियों का साथ न दे सके, जो मज़दूर और किसानों के संगठन के नाम पर काँग्रेस का विरोध करने और तिरंगे झण्डे के बजाय लाल झण्डे को तरजीह देने लगे थे। राष्ट्रपति ने कुछ काँग्रेसियों में बढ़ती हुई इस प्रवृत्ति का तीव्र विरोध किया और ऐसे लोगों पर अनुशासन की कार्रवाई की धमकी भी दी। उन्होंने लाल झण्डे के प्रति सम्मान प्रकट करते हुए भी बताया कि उसका अपना एक स्थान है, लेकिन वह काँग्रेसी झण्डे का, जो समूचे देश का झण्डा है और जिसके नीचे सारा देश इकट्ठा होकर राष्ट्रीय मुक्ति का प्रयत्न कर रहा है, स्थान नहीं ले सकता। उनकी इस सामयिक चेतावनी ने काँग्रेस के दक्षिण और वाम पक्षों में बढ़ती हुई विरोधाग्नि को काफ़ी शान्त कर दिया। उन्हें इन दौरों में ३८८४०) रु० की थैलियाँ मिलीं।

अनुशासन की प्रवृत्ति

राष्ट्रपति ने काँग्रेस में अनुशासन की ओर भी काफ़ी ध्यान दिया। उनका विचार था और वह ठीक था कि अब काँग्रेस इतनी महत्वपूर्ण और उत्तरदायी संस्था हो गई है कि उसके सदस्यों का नीतिविरुद्ध व्यवहार उसे काफ़ी नुकसान पहुँचा सकता है। फिर प्रान्तीय असेम्बलियों के चुनाव सिर पर आ रहे थे। इनमें व्यक्तियों के स्वार्थों के परस्पर टकराने और काँग्रेस-कार्य में अव्यवस्था की, जिसका परिणाम चुनाव में काँग्रेसी उम्मीदवारों की हार होता, बहुत अधिक संभावना थी। इसलिए संगठन, काँग्रेस के प्रति अद्भुत निष्ठा, आज्ञापालकता और अनुशासन आदि गुणों की आवश्यकता राष्ट्रपति ने बड़े ज़ोरों से अनुभव की। इन्हीं दिनों श्री राजगोपालाचार्य ने इस बिना पर वर्किंग कमेटी से इस्तीफ़ा दे दिया कि डॉ० राजन ने, जो काँग्रेसी सदस्य थे, त्रिचनापली म्यूनिसिपल कमेटी में सभापति-पद के लिए ग़ैरकाँग्रेसी उम्मीदवार को वोट देकर अनुशासन भंग किया है। डॉ० राजन केन्द्रीय असेम्बली में भी कांग्रेसी सदस्य थे। इस घटना ने अनुशासन की और भी ज्यादा आवश्यकता सिद्ध की। वर्किंग कमेटी ने अगस्त में डॉ० राजन के व्यवहार पर खेद-प्रकाश किया। दिसम्बर की बैठक में वर्किंग कमेटी ने एक लम्बे प्रस्ताव द्वारा निश्चय किया कि वर्किंग कमेटी उन काँग्रेस कमेटियों और काँग्रेसियों के विरुद्ध अनुशासन की कार्रवाई करेगी, जो काँग्रेस के कार्यक्रम और निश्चयों के विरुद्ध आचरण या प्रचार करेंगे, उच्च अधिकारियों और नियत किये मध्यस्थ के निर्णय को न मानेंगे, काँग्रेसी पैसे के दुरुपयोग के अपराधी सिद्ध होंगे, काँग्रेस की प्रतिष्ठा को कम करनेवाला कार्य करेंगे और सदस्यों की भर्त्ती में धोखेबाजी से काम लेंगे। यह दण्ड काँग्रेस कमेटियों के भंग या काँग्रेसियों को पदाधिकार और सदस्यता से च्युत करने या चुनाव में भाग लेने की इजाज़त न देने के रूपों में दिया जा सकता है। प्रान्तीय कांग्रेस कार्यकारिणी समितियों को भी यह अधिकार दिया गया। जब वर्किंग कमेटी की बैठक का समय न हो, तब राष्ट्रपति को अनुशासन की कार्रवाई करने का अधिकार दिया गया। अनेक अवसरों पर यह कठोर कार्रवाई करनी भी पड़ी, लेकिन इसका फल बहुत सन्तोषजनक रहा। अनुशासन के भय ने कांग्रेस को विश्रृंखल और अव्यवस्थित होने से बचा लिया। श्री नरीमान और डॉ० खरे जैसे प्रभावशाली व्यक्ति भी इसके वज्र से न बच सके। बंगाल के प्रमुख काँग्रेसी नेता श्री नलिनीरंजन सरकार ने जब अस्थायी मन्त्रिमण्डल की सदस्यता स्वीकार करली, तब उनसे भी कांग्रेस-सदस्य होने का अधिकार छीन लिया गया।

चुनाव का घोषणापत्र

१९३६ के दिसम्बर में ही फैजपुर-काँग्रेस हुई थी, लेकिन उसकी चर्चा करने

से पूर्व आल इण्डिया काँग्रेस कमेटी की बम्बई की बैठक की चर्चा कर लेना ठीक होगा। लखनऊ-काँग्रेस के निश्चय के अनुसार चुनाव के घोषणापत्र पर अ० भा० काँग्रेस कमेटी की स्वीकृति लेना आवश्यक था। इसलिए अगस्त में बम्बई में इसकी बैठक बुलाई गई। इसमें डॉ० अन्सारी और श्री अब्बास तैयबजी के देहावसान पर समवेदना-प्रकाश के बाद ख़ान अब्दुलगफ्फ़ारखाँ पर, जो १ अगस्त को रिहा कर दिये गये थे, पंजाब व सीमान्त में न जाने की पाबन्दी तथा सीमाप्रान्तीय काँग्रेस पार्लमेण्टरी बोर्ड के कार्यकर्त्ताओं की गिरफ्तारी की निन्दा की गई। इसके बाद श्री राजेन्द्र बाबू ने चुनाव-घोषणापत्र पेश किया। अनेक संशोधनों में से दो स्वीकृत कर लिये गए। स्वीकृत घोषणापत्र निम्नलिखित है :—

"पचास साल से अधिक समय से काँग्रेस भारत की आज़ादी के लिए कोशिश कर रही है। जब-जब इसकी ताकत बढ़ी और यह भारतीय जनता की ब्रिटिश साम्राज्य द्वारा होनेवाले शोषण को अन्त करने की इच्छा और भावना को प्रकट करने लगी, तब-तब इसे सरकार से संघर्ष में आना पड़ा है। पिछले १६ सालों में काँग्रेस ने मुल्क की आज़ादी के लिए कई बड़े आन्दोलन चलाये हैं। शान्त सामूहिक कार्रवाई तथा जनता के संयममय बलिदान व कष्टसहन द्वारा आज़ादी हासिल करने की कोशिश की है। काँग्रेस के नेतृत्व को जनता ने बहुत उत्साह के साथ स्वीकृत किया और इस प्रकार स्वराज्य के जन्मसिद्ध अधिकार को पुष्ट किया। आज़ादी की वह लड़ाई आज भी जारी है और जबतक भारत आज़ाद नहीं हो जाता, तबतक जारी रहेगी।

"पिछले सालों भारत और संसार में आर्थिक संकट रहा है। इस कारण भारत की सभी श्रेणियों की माली हालत लगातार गिर रही है। ग़रीबी की सताई जनता आज लगातार विनाश की ओर जा रही है। इसका तुरन्त क्रान्तिकारी हल होना चाहिए। हमारे किसानों व मजदूरों के भाग्य में ग़रीबी और बेकारी सदा से रही है, लेकिन आज तो यह अन्य वर्गों, कारीगरों, व्यापारियों, छोटे-छोटे व्यापारियों, मध्यम श्रेणियों और बुद्धिजीवियों तक भी फैल गई है और उन्हें तबाह कर रही है। आज़ादी ही वस्तुतः हमारी सब समस्याओं को हल कर सकेगी। लेकिन दूसरी ओर सरकार ने उन बन्धनों को, जिनसे वह भारत को जकड़े हुए है, और अधिक मज़बूत करने तथा भारत के शोषण को स्थायी बनाने के विचार से गवर्नमेंण्ट आफ इण्डिया एक्ट बनाया है। भारत इस लादे गये विधान को स्वीकार नहीं करता, और न वह किसी ऐसे विधान को स्वीकार करेगा, जो किसी बाहरी शक्ति द्वारा लादा जायगा और जो भारत के स्वभाग्यनिर्णय के सिद्धान्त को नहीं मानता। भारत की पूर्ण स्वतन्त्रता के आधार पर राष्ट्रीय पंचायत (कांस्टिट्यूएण्ट असेम्बली) द्वारा तैयार किये गये विधान को ही भारत स्वीकार करेगा।

"काँग्रेस धारासभाओं से बाहर के रचनात्मक कार्य और जनता के संगठन पर अब भी पहले की भाँति विश्वास रखती है, तथापि विदेशी प्रभुत्त्व और शोषण को मज़बूत बनाने वाली प्रतिगामी शक्तियों को रोकने के लिए आगामी निर्वाचन में प्रान्तीय धारा-सभाओं का चुनाव लड़ने का निश्चय किया गया है। मगर काँग्रेसियों को धारासभा में भेजने का उद्देश्य विधान के साथ किसी तरह से सहयोग करना नहीं है, बल्कि उससे लड़ना है और उसका अंत करना है। यथासंभव काँग्रेस का उद्देश्य विधान को रद करने की काँग्रेस-नीति को कार्य में परिणत करना, ब्रिटिश साम्राज्य-वाद और भारत पर उसके शासन का मुक़ाबिला करना और भारतीय जनता का शोषण रोकना है।"

असेम्बलियों के सदस्यों को भी कुछ सूचनायें इस घोषणा-पत्र में दी गई थीं। उनके अनुसार काँग्रेसी प्रतिनिधि धारा-सभाओं में जाकर नये विधान में वर्णित वाइ-सराय व गवर्नरों के विशेषाधिकारों और संरक्षणों का प्रतिरोध करेंगे, हरेक सम्भव उपाय से भिन्न-भिन्न दमनकारी कानूनों व आर्डिनेंसों को समाप्त कराने की चेष्टा करेंगे, नागरिक स्वाधीनता की स्थापना की कोशिश करेंगे, तथा राजनैतिक कैदियों व नज़रबन्दों को छुड़वाने की कोशिश करेंगे।

इन धारा-सभाओं से आज़ादी हासिल नहीं होनेवाली है, फिर भी काँग्रेस ने इस आशय से अपना कार्यक्रम पेश किया, जिससे मालूम हो जाय कि शक्ति हाथ में आने पर काँग्रेस क्या करना चाहती है। कराची वाले प्रस्ताव के अनुसार काँग्रेस किसानों-मजदूरों की आर्थिक व सामाजिक अवस्था ऊँची करेगी, किसानों की क़र्ज़दारी, मज-दूरों की बेकारी व बीमारी का बीमा, छोटे या बड़े धन्धे को प्रोत्साहन और हरिजनों व स्त्रियों के नागरिकता के मौलिक अधिकारों की रक्षा पर विशेष ध्यान देगी। विवादास्पद साम्प्रदायिक निर्णय पर भी इस घोषणा में अपनी नीति फिर से स्पष्ट की गई थी : "साम्प्रदायिक निर्णय पर बहुत-सा विवाद उठ खड़ा हुआ है और काँग्रेस के रवैये को समझने में प्रायः ग़लती होती रहती है। नये शासन-विधान के रद होते ही उसका एक हिस्सा साम्प्रदायिक निर्णय भी स्वयं रद हो जायगा। नवीन शासन-विधान के अलावा भी साम्प्रदायिक निर्णय काँग्रेस को पूर्णतया अस्वीकार्य है, क्योंकि यह स्वाधीनता और प्रजातंत्र की भावनाओं को नष्ट कर देता है। आर्थिक और सामा-जिक प्रश्नों के मार्ग में रोड़ा अटकाता है, राष्ट्रीय प्रगति में बाधक है और भारतीय एकता को जड़ से उखाड़ देता है।" इसके द्वारा सरकार के अलावा किसी भी दल को लाभ नहीं पहुँचता, "इसलिए इसके बारे में काँग्रेस का रवैया तटस्थता या उदा-सीनता का नहीं है। वह तो इसे नापसन्द करती है और ख़त्म करना चाहती है। काँग्रेस ने हमेशा प्रमुख जातियों के पारस्परिक सहयोग और सद्भावना पर ज़ोर दिया

है। इसीसे यह समस्या हल होगी। ब्रिटिश सरकार की सहायता से दूसरे दल के मूल्य पर अपना स्वार्थ सिद्ध करना साम्प्रदायिक विद्वेष को और भी बढ़ा देगा और सरकार इसके द्वारा दोनों जातियों को लूटना चाहेगी। भारत के राष्ट्रीय सम्मान के यह सर्वथा प्रतिकूल है और स्वाधीनता-संग्राम के साथ यह मेल भी नहीं खाता। इसलिए काँग्रेस की सम्मति में इस अवस्था के प्रतिकार का तरीका यह है कि स्वाधीनता-संग्राम को और ज्यादा बढ़ाया जाय और इस बीच में सर्व-सम्मत समझौते का उपाय भी किया जाय। एक सम्प्रदाय से दूसरे सम्प्रदाय के विरोध के बावजूद इस निश्चय को बदलवाने के प्रयत्नों से शायद यह निर्णय चिरस्थायी हो जायगा और सरकार को भी दोनों के झगड़े का लाभ उठाकर इसे लागू करने में आसानी हो जायगी।" यह भी कहा गया था कि साम्प्रदायिक समस्या बड़ी अवश्य है, लेकिन ग़रीबी और बढ़ती हुई बेकारी उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण है। पदग्रहण के प्रश्न को इस घोषणा में भी चुनावों के बाद के लिए स्थगित कर दिया गया था। इस घोषणपत्र के साथ कराची का मौलिक अधिकारों वाला प्रस्ताव और लखनऊ का किसानों सम्बन्धी प्रस्ताव भी जोड़ दिये गये थे।

यह चुनाव-घोषणापत्र प्रकाशित होने के साथ ही सारे देश में चुनावों की चर्चा चल पड़ी। नवम्बर में पार्लमेण्टरी कमेटी ने चुनाव के लिए धन की अपील प्रकाशित की। सारे देश में चुनाव का काम ज़ोर-शोर से शुरू होता देखकर काँग्रेस-विरोधियों ने भी विभिन्न राष्ट्रीय और प्रगतिशील नाम रखकर काँग्रेस का मुकाबिला करने का निश्चय किया। काँग्रेस के सिद्धान्तों का विरोध आसान न था, इसलिए कुछ लोगों ने काँग्रेस पर कीचड़ उछालने के ख़याल से तिलक-स्वराज्य-फण्ड के दुरुपयोग की चर्चा शुरू की। इसपर वर्किंग कमेटी ने २९–३० जून के एक प्रस्ताव द्वारा इस पकार के निराधार अभियोगों के लिए अदालत की शरण लेने और दफ्तर का हिसाब हरेक को देखने की व्यवस्था करने का निश्चय किया। इसी प्रस्ताव के अनुसार काँग्रेस के खजांची सेठ जमनालाल बजाज ने नागपुर के एक मराठी पत्र व दिल्ली के एक प्रकाशक पर दावा भी दायर कर दिया। यद्यपि सरकार ने चुनाव के मामलों से तटस्थ रहने का वचन दिया था, तथापि अनेक स्थानों से ऐसी खबरें मिलीं कि सरकार चुनाव में हस्तक्षप कर रही है। कोर्ट आफ़ बाड्‌र्स यू० पी० ने सब ज़िला-अफ़सरों को हिदायत दी थी कि संरक्षित जमींदारों का हित काँग्रेसी-विरोधी के समर्थन और कांग्रेसी उम्मीदवार को बुरी हार देने में है।

: २ :

देश में नये युग की शुरुआत

फ़ैज़पुर-काँग्रेस

पं० जवाहरलाल नेहरू को फ़ैज़पुर-कांग्रेस का सभापति चुनकर फिर एक प्रथा को तोड़ा गया। काँग्रेस के इतिहास में अबतक एक बार भी ऐसा मौक़ा नहीं आया था कि एक सभापति को दूसरे वर्ष भी सभापति चुना गया हो। लेकिन पं०जवाहरलाल को फिर भी समस्त देश ने सभापतित्व देने में संकोच नहीं किया। चुनाव सिर पर थे, अत्यन्त तेजस्वी, शक्ति और साहसयुक्त नेतृत्व के बिना काम न चल सकता था। फ़ैजपुर-काँग्रेस की दूसरी विशेषता यह थी कि यह किसी बड़े शहर में न होकर रेलवे-लाइन से दूर एक छोटे-से गाँव में हो रही थी। यहाँ शहर की सुविधायें न थीं, लेकिन श्री शंकरराव देव की अध्यक्षता में काँग्रेस की स्वागत-समिति ने इसकी कोई चिन्ता न की। कवि रवीन्द्र की प्रसिद्ध संस्था शान्ति-निकेतन के कलाकार श्री नन्दलाल बोस का सहयोग भी तिलकनगर व प्रदर्शिनी के निर्माण के लिए मिल गया। गाँधीजी की इच्छानुसार इतने बड़े नगर को बनाने के लिए न कोई विदेशी सामान मँगाया गया और न कोई ऐसा सामान जो गाँवों में न मिल सकता हो फिर भी तिलकनगर बहुत शानदार बन गया। प्रदर्शिनी का काम भी चरखा-संघ व ग्रामोद्योग-संघ के सुपुर्द था, जिसमें घरेलू धंधों की रचना और निर्माण के तरीक़े दिखाये गये थे। गाँव में काँग्रेस करने से जहाँ हज़ारों गाँववालों को आर्थिक सहायता मिली, वहाँ काँग्रेस का सन्देश गाँवों के किसानों तक फैलने में भी बहुत मदद मिली। राष्ट्रपति का जलूस भी बैलों के रथ पर निकाला गया।

राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल ने अपने भाषण में प्राय: वही विचार दुहराये, जो लखनऊ में प्रकट किये थे। साम्राज्यवाद और प्रजातन्त्रवाद के संसार के अनेक भागों में होनेवाले संघर्ष का परिचय देते हुए दुनिया की भिन्न-भिन्न घटनाओं में राष्ट्र-पति ने एक सम्बन्ध का प्रतिपादन किया। दुनिया में फैली हुई बुराइयों और बीमा-रियों का सर्वोत्कृष्ट उपाय समाजवादी सिद्धान्तों पर समाज का संगठन है, यह मानते हुए भी राष्ट्रपति ने कहा कि आज हमारी लड़ाई का ध्येय समाजवाद नहीं है। हमारा उद्देश्य पूर्ण प्रजातन्त्र स्थापित करना है, यह और बात है कि घटनाओं

का स्वाभाविक विकास हमें समाजवाद की ओर ले जाय। नये विधान को रद करना, कांस्टिट्युएण्ट असेम्बली की माँग, देशी रियासतों का प्रतिगामी रुख आदि पर विचार प्रकट करने के बाद पं० जवाहरलाल ने नई धारा-सभाओं में पदग्रहण के विरुद्ध अपनी लखनऊवाली सम्मति को स्पष्ट शब्दों में दुहराया। लेकिन फ़ैजपुर-काँग्रेस ने इस प्रश्न पर गरमागरम बहस के बाद इसे फिर से चुनावों के बाद तक के लिए टाल दिया। इसी प्रस्ताव में नये विधान को पूरी तौर पर रद करने, राष्ट्रीय पंचायत की माँग करने, इसी उद्देश्य से काँग्रेस का संगठन करने, चुनाव-घोषणा-पत्र के समर्थन और चुनाव-आन्दोलन में जनता के सहयोग की अपील आदि की भी चर्चा थी। पदग्रहण के प्रश्न को टालने के विरुद्ध समाजवादियों ने काफ़ी कोशिश की, लेकिन उन्हें सफलता न मिली। शेष २१ प्रस्तावों में डा० अंसारी, श्री अब्बास तैयबजी, डा० वी. सुब्रह्मण्यम्, पं० प्यारेमोहन दत्तात्रेय आदि के देहावसान पर शोक, विश्व-शान्ति-परिषद् से सहयोग, बरमा के पृथक् होने पर काँग्रेस-विधान में परिवर्तन, स्पेन के गृहयुद्ध में अन्य राष्ट्रों की सेनाओं के आगे न आने की निन्दा और स्पेन की जनता से सहानुभूति, पिछड़े प्रदेशों व चीफ़ कमिश्नरों के प्रान्तों में प्रतिनिधिशासन, दुर्भिक्ष, बाढ़, तूफ़ान आदि दैवी विपत्ति-ग्रस्तों से सहानुभूति, ब्रिटिश साम्राज्यवाद के हित की दृष्टि से किये गये किसी युद्ध में भाग न लेने का निश्चय, नज़रबन्दों की रिहाई की प्रार्थना, उनके साथ किये जानेवाले दुर्व्यवहार और अण्डमान के निर्वासन को फिर से जारी करने की निन्दा, प्रवासी भारतीयों से सहानुभूति, बंगाल व बिहार में कोयले की खानों की दुर्घटनाओं के कारणों की जांच और बंगाल नागपुर रेलवे के हड़ताली मज़दूरों से सहानुभूति के प्रस्ताव पास किये गये। कुछ मुख्य प्रस्ताव इस आशय के थे :—नये विधान का विरोध करने के लिए अप्रैल १९३७ को, जिस दिन से नया विधान शुरू होना था, देशव्यापी हड़ताल की जाय। ब्रिटिश नरेश के व्यक्तित्व का अपमान न करते हुए भी उसके दरबार या अन्य किसी समारोह में भाग न लेने का निश्चय किया गया, क्योंकि काँग्रेस साम्राज्यवादी नियंत्रण को नष्ट करने और पूर्णस्वराज्य प्राप्त करने की प्रतिज्ञा से बँधी हुई है। एक प्रस्ताव में मतदाताओं से काँग्रेसी उम्मीदवारों को ही असेम्बलियों के चुनावों में मत देने का अनुरोध किया गया। ब्रिटिश भारत व रियासतों में अबतक भी लगातार होनेवाले नागरिक अधिकारों के अपहरण की तीव्र निन्दा की गई और कहा गया कि अबतक भी सैकड़ों काँग्रेस-कमेटियाँ, मज़दूर-किसान-संस्थायें ग़ैरक़ानूनी हैं, दमनकारी क़ानून जारी हैं। सी-कस्टम्स एक्ट के अनुसार बहुत-से अखबारों व किताबों पर पाबन्दी लगी हुई है, बिना मुकदमे के हज़ारों लोग नज़रबन्द किये गये हैं, सीमाप्रान्त व बंगाल में नागरिकों की स्वतन्त्रता पर बड़े-

बड़े बंधन लगाये गये हैं। एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव द्वारा प्रान्तीय असेम्बलियों के चुनाव के बाद एक कन्वेंशन बुलाने का निश्चय किया गया, जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय पंचायत की माँग करना व संघ-शासन को रोकने तथा चुनाव-घोषणापत्र में की गई प्रतिज्ञाओं को अमल में लाने के उपायों पर विचार करना रखा गया। काँग्रेस का जनता से संपर्क बढ़ाने के उद्देश्य से विधान में तब्दीली करने पर विचार करने के लिए एक कमेटी क़ायम की गई। किसानों की समस्या को देश की सबसे महत्वपूर्ण समस्या मानते हुए इस प्रश्न के व्यापक अध्ययन के बाद एक देशव्यापी योजना बनाने की आवश्यकता अनुभव की गई और तबतक के लिए लगान-मालगुजारी में कमी, जिन ज़मीनों से बचत नहीं होती उनपर लगान-मालगुजारी की माफ़ी, खेती की आमदनी पर इन्कमटैक्स की दर से कर लगाने, आबियाना कम करने, बेगार और नाजायज़ करों का खातमा, क़र्ज़दारी से किसानों को छुड़ाना, बकाया धीरे-धीरे खत्म करना आदि उपायों पर ज़ोर दिया गया।

चुनाव-संग्राम

फ़ैज़पुर-काँग्रेस समाप्त होते ही बड़े-से-बड़े नेता से लेकर छोटे-छोटे स्वयंसेवकों तक सभी कार्यकर्ता प्रान्तीय असेम्बलियों के चुनाव में जी-जान से जुट पड़े। वर्किंग कमेटी के सभी सदस्य प्रान्त-प्रान्त का दौरा करने लगे। राष्ट्रपति के तूफ़ानी दौरों ने तो सारे देश में तहलका मचा दिया। सप्ताह में १५०० मील की तेज़ चाल से उन्होंने साढ़े तीन मास तक दौरा किया। कभी-कभी तो उन्हें मोटर में लगातार १३-१४ घण्टे तक भी बैठना पड़ा। एक दिन में ६-६ सभाओं में और बहुत बार तो १०-१२ सभाओं तक में उन्हें बोलना पड़ा। दिन-रात, सप्ताह और महीने, राष्ट्रपति ने एक कर दिये। न उन्हें खाने की चिन्ता थी, न सोने की। सारे देश में उनके इन तूफ़ानी दौरों से तहलका मच गया। उन्होंने कम-से-कम एक करोड़ आदमियों को काँग्रेस का सन्देश सुनाया। अन्य नेताओं नें भी काँग्रेस के प्रचार में ग़जब कर दिया। सारे देश में काँग्रेस-प्रचार की एक बाढ़-सी आगई। इस विशाल देश का गाँव-गाँव छान डाला गया। चुनाव का परिणाम तो पीछे निकला, लेकिन इन दौरों से, भाषणों, लेखों, हैण्डबिलों और अख़बारों से, साधारण जनता को भारत की राजनैतिक समस्याओं की अमूल्य शिक्षा मिली। बड़े-बड़े ज़मींदार, पूँजीपति और प्रभावशाली व्यक्ति काँग्रेस के मुक़ाबिले में खड़े हुए, लेकिन जनता उनसे पूछती कि जब काँग्रेसियों पर लाठियाँ बरस रही थीं, उनपर गोलियाँ चलाई जा रही थीं, उन्हें जेलों में ठूँसा जारहा था, तब तुम क्या कर रहे थे ? तुमने सरकारी कुर्सियों पर बैठकर हमारे लिए क्या कर लिया ? काँग्रेसी उम्मीदवार की योग्यता-अयोग्यता का

सवाल ही न था, वहाँ तो सवाल था काँग्रेस का। श्रीमती नायडू ने कहा था कि काँग्रेस एक बाँस को भी खड़ा करदे, तो उसे ही वोट मिलेगा। सचमुच चुनाव में यही हालत थी। विरोधी उम्मीदवार जब रुपयों की वर्षा कर रहे थे, तब मतदाता पैदल जा-जाकर या बैलगाड़ियों में जाकर गाँधी और जवाहरलाल के नाम पर काँग्रेसी उम्मीदवार को वोट दे रहे थे। राष्ट्रपति ने मतदाताओं को यही संदेश दिया कि वोट देना तुम्हारा धर्म है, तुम स्वयं जाओ, वोट दे आओ; तुम्हें बुलाने के लिए न लारी आयगी, न स्वयंसेवक। ग्रामीणों पर ज़मींदारों ने कितने ही अत्याचार किये, कितनी धमकियाँ और प्रलोभन दिये, लेकिन वे अपने हित और अहित को समझ चुके थे। काँग्रेस के मार्ग में सरकार की सब रुकावटें भी बेकार गईं। काँग्रेसी उम्मीदवार हज़ारों वोटों से जीते। बहुत-से प्रतिष्ठित विरोधी उम्मीदवार अपनी जमानत तक खो बैठे। युक्तप्रान्तीय कौंसिल के भूतपूर्व अध्यक्ष सर सीताराम एक स्थान पर ७००० वोटों से हारे और दूसरी जगह जमानत भी खो बैठे। मिदनापुर में जहाँ सरकार के सभी दमन-क़ानून ज़ोरों से काम कर रहे थे, कांग्रेसी उम्मीदवार ६४९३२ वोटों से जीता। श्री सी० वाई० चिन्तामणि और राजा बोबिली भी हार गये। जस्टिस पार्टी के एक और नेता १५००० वोटों से हारे। कुल ११ प्रान्तों में चुनाव हुआ। बम्बई, युक्तप्रान्त, मद्रास, मध्यप्रान्त, उड़ीसा और बिहार में तो काँग्रेस का स्थायी बहुमत रहा। तीन प्रान्तों—सीमाप्रान्त, आसाम, और बंगाल म सबसे बड़ी पार्टी काँग्रेस की ही रही। पंजाब और सिंध में काँग्रेस अल्पसंख्या में रही। सारे देश में विजय का परिणाम सुनकर हर्ष का पारावार न रहा। सरकार और ब्रिटेन के राजनीतिज्ञ दाँतों-तले अंगुली दबाकर कहने लगे कि हमने तो समझा था कि लार्ड विलिंगडन के आर्डिनेन्स-राज ने काँग्रेस को तबाह कर दिया, लेकिन वह तो पहले से भी अधिक प्रभाव, बल और प्रतिष्ठा के साथ आज हमारा मुक़ाबिला करने के लिये उपस्थित है!

पदग्रहण की समस्या

चुनाव भी समाप्त होचुके। अब पदग्रहण के प्रश्न को, जो डेढ़-दो साल से टलता आरहा था, और टाला नहीं जासकता था। १ अप्रैल से नया शासन-विधान शुरू होजाना था। उससे पहले इस विषय पर निश्चय कर लेना ज़रूरी था। काँग्रेस में इस प्रश्न पर दो मत थे और दोनों बहुत मज़बूत थे। सारे समाजवादी पदग्रहण के विरोधी थे। डा० पट्टाभि सीतारामैया, सरदार शार्दूलसिंह, श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन आदि भी इस प्रश्न पर समाजवादियों के साथ थे; और सबसे बड़ी बात यह कि स्वयं राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल पदग्रहण के कट्टर विरोधी थे। इन लोगों का कहना था कि पदग्रहण से काँग्रेस की वह क्रान्तिकारी मनोवृत्ति नष्ट होजायगी, जिसे उसने

पिछले १६-१७ सालों से गाँधीजी के नेतृत्व में त्याग, तपस्या और बलिदान द्वारा उत्पन्न किया है। हम पदों पर रहकर जनता का वास्तविक हित भी नहीं कर सकेंगे। एक तो बहुत से संरक्षण रख लिये गये हैं, और फिर गवर्नर मंत्रियों के किसी भी निश्चय को अपने विशेषाधिकारों द्वारा रद कर सकता है। दूसरी ओर पदों के समर्थक दल के नेता श्री सत्यमूर्ति थे। समाजवादियों का कहना था कि 'कांग्रेस हाई-कमाण्ड' (यह शब्द इन्हीं दिनों से वर्किंग-कमेटी के लिए बहुत अधिक प्रयुक्त होने लगा है) भी पदग्रहण का समर्थक था। पदग्रहण के समर्थक कहते थे कि पदग्रहण से ही क्रान्तिकारी मनोवृत्ति नष्ट नहीं होजायगी। नये विधान को और ख़ासकर संघ-विधान को कुचलने के लिए सरकार के सभी सामरिक मोर्चों पर अधिकार करके काम में रुकावट (डेडलाक) पैदा करना और विधान की पोल खोल देना अधिक आवश्यक है। दोनों दल अपनी पूरी ताक़त के साथ दिल्ली में होनेवाली अ० भा० काँग्रेस कमेटी में उपस्थित हुए। यह भय किया जाने लगा था कि कहीं इसी प्रश्न पर काँग्रेस में दलबन्दी न होजाय। महात्मा गाँधी यद्यपि काँग्रेस से बम्बई से ही अलग होगये थे, लेकिन नेता सदा उनसे परामर्श करके विकट समस्याओं को सुलझाया करते थे। इस प्रश्न पर भी नेताओं ने इस राष्ट्रपितामह से परामर्श माँगा। उन्होंने एक प्रस्ताव बनाया। उस समय तो नहीं, लेकिन पीछे जाकर यह अनुभव हुआ कि इस प्रस्ताव का गंभीर अर्थ क्या था और इसमें कितनी गज़ब की दूरदर्शिता और राजनीतिज्ञता भरी हुई थी। वर्किंग-कमेटी ने उसे स्वीकार कर लिया और अ० भा० काँग्रेस कमेटी ने भी १० घण्टे की गरमागरम बहस के बाद उसे स्वीकार कर लिया। अनेक संशोधन पेश हुए और सभी गिर गये। इस प्रस्ताव का आशय यह था—राष्ट्र ने काँग्रेस का चुनाव में साथ देकर यह साबित कर दिया है कि वह नये विधान को नष्ट करने की काँग्रेस की नीति का पूर्ण समर्थक है। यदि सरकार तीव्र लोकमत को ठुकराकर भी इस विधान को भारत पर लादे, तो असेम्बलियों के सदस्यों का कर्तव्य है कि वे काँग्रेसी नीति के अनुसार असेम्बलियों के अन्दर और बाहर इसका मुकाबिला और विध्वंस करने की कोशिश करे। अ० भा० काँग्रेस कमेटी असेम्बली की काँग्रेस-पार्टियों को, जहाँ वे बहुमत में हैं, पदग्रहण की आज्ञा देती है, बशर्ते कि काँग्रेस-पार्टी के नेता को गवर्नर यह विश्वास दिलादे कि विधान के अन्तर्गत कार्य करते हुए मंत्रियों के फ़ैसलों को गवर्नर अपने विशेषाधिकार से नहीं ठुकरायेगा। पदग्रहण के समर्थकों ने इस शर्त को स्वीकार कर लिया, लेकिन विरोधी अपने मत पर दृढ़ रहे। आख़िर यह प्रस्ताव ७०के विरुद्ध १२७ मतों से पास होगया। यह प्रस्ताव पेश करते हुए बा०राजेन्द्रप्रसाद ने कहा था कि काँग्रेस महज़ इसीलिए पदग्रहण करती है, ताकि पूर्ण स्वराज्य-प्राप्ति की लड़ाई के लिए देश को संगठित करने में उससे पूरी सहायता ली जासके।

कनवेन्शन

अ० भा० काँ० कमेटी के अधिवेशन के बाद दो दिन तक दिल्ली में ही कनवेंशन किया गया। इसमें अ० भा० काँग्रेस कमेटी के २१५ सदस्य तथा केन्द्रीय और प्रान्तीय असेम्बलियों के ५०० काँग्रेसी सदस्य सम्मिलित हुए थे। इसमें राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल ने निम्नलिखित प्रतिज्ञा-पत्र पढ़ा और सबने उसे दोहराया:—

"इस आल इण्डिया कन्वेशन के मेम्बर की हैसियत से, जिसे नेशनल काँग्रेस ने बुलाया है, मैं अहद और प्रतिज्ञा करता हूँ कि हिन्दुस्तान की सेवा करूँगा और असेम्बली या कौंसिल के अन्दर और बाहर हिन्दुस्तान की आज़ादी (पूर्ण स्वराज्य) हासिल करने और उसकी ग़रीबी व शोषण को मिटाने की पूरी कोशिश करूँगा। मैं यह भी वचन देता हूँ कि काँग्रेस का अनुशासन व हुक्म मानते हुए काँग्रेस के आदर्श व मकसदों को कामयाब बनाना हमेशा मेरा काम रहेगा, ताकि हिन्दुस्तान पूरी तौर पर आज़ाद हो और उसकी जनता उन भारी मुसीबतों के बोझ से छुटकारा पाये, जिनके तले वह दबी जारही है।"

इसकी एक विशेषता यह थी कि हिन्दुस्तानी के उक्त शब्दों में ही सबने प्रतिज्ञा कर हिन्दुस्तानी के राष्ट्रभाषा के अधिकार को स्वीकार किया। जिन सदस्यों को हिन्दुस्तानी का ज्ञान न था, उन्हें अंग्रेजी में इसका अर्थ सुना दिया गया। इसके बाद कन्वेंशन ने नये शासन-विधान की अस्वीकृति, राष्ट्रीय पंचायत की माँग और असेम्बलियों में शासन-विधान को रद करने के प्रस्ताव पेश करने का निश्चय, काँग्रेस वर्किंग-कमेटी द्वारा निर्धारित कार्यक्रम को अमल में लाने का फैसला, तथा धारासभाओं से बाहर भी काम करते रहने का व्रत आदि सम्बन्धी प्रस्ताव पास किये। यहाँ उस कार्यक्रम का निर्देश कर देना भी अप्रासंगिक न होगा, जो २७-२८ फरवरी १९३७ को वर्किंग-कमेटी ने वर्धा में असेम्बलियों के काँग्रेसी सदस्यों के लिए नियत किया था। काँग्रेस वर्किंग-कमेटी ने एक लम्बे प्रस्ताव द्वारा पहले यह घोषणा की कि कौंसिल-प्रवेश का उद्देश्य ब्रिटिश सरकार से सहयोग नहीं, बल्कि नये विधान का मुकाबिला करना है। काँग्रेस का उद्देश्य पूर्ण स्वराज्य है और वह बालिग़-मताधिकार पर निर्मित राष्ट्रीय पंचायत द्वारा बनाये गये विधान को ही स्वीकार करेगी। इसलिए काँग्रेसी सदस्यों का पहला फ़र्ज़ है कि वे असेम्बलियों में कांस्टिट्युएण्ट असेम्बली की माँग पेश करें और नये संघ-विधान के चालू होने में पूरी रुकावटें डालें। भारत में ब्रिटिश साम्राज्यवाद की शक्ति और प्रतिष्ठा को बढ़ानेवाले किसी समारोह या कार्य में उन्हें भाग न लेना चाहिए। सरकारी समारोह या सामाजिक पार्टियों से उन्हें दूर रहना चाहिए। कोई काँग्रेसी सदस्य सरकार का कोई खिताब स्वीकार न करे। प्रत्येक

असेम्बली की काँग्रेस-पार्टी को संगठन व अनुशासन में रहना चाहिए। कोई काँग्रेसी सदस्य सरकार से कोई ताल्लुक न रक्खे, पार्टी से बिना छुट्टी लिये ग़ैरहाजिर न रहे, और सभी काँग्रेसी सदस्य खद्दर पहनें। असेम्बली के किसी ग़ैर-काँग्रेसी दल से बिना वर्किंग-कमेटी की राय लिये मेल न करे। काँग्रेसी सदस्य इस कार्यक्रम को शीघ्र-से-शीघ्र अमल में लाने की कोशिश करें––लगान-मालगुजारी में काफी कमी, आनुपातिक आय-कर और कृषि-कर, किसानों की मौरूसी ऋणों से मुक्ति, सब दमनकारी क़ानूनों का रद किया जाना, राजनैतिक कैदियों और नजरबन्दों की रिहाई, भद्र-अवज्ञा-आन्दोलन में ज़ब्त ज़मीनों व जायदादों की वापसी, वेतन में कमी किये बग़ैर आठ घण्टे का दिवस, नशाबन्दी, बेकारी की समस्या का हल, भारी वेतनों, भत्तों और सरकारी ख़र्चे में कमी। जब कभी गवर्नर विशेषाधिकारों का प्रयोग करके काम में रुकावट पैदा करने का अवसर लावें, तब उनसे न बचने की भी सलाह दी गई। फौज़, आर्थिक नीति आदि सार्वदेशिक प्रश्नों पर भी ज़ोर देने की हिदायत की गई। इसी कार्यक्रम को कनवेंशन में उपस्थित काँग्रेसी सदस्यों ने अमल में लाने का निश्चय किया था।

वैधानिक संकट

इस तरह काँग्रेस और काँग्रेसी सदस्य भविष्य के बारे में निश्चय कर रहे थे, लेकिन अभी भारत के राजनैतिक रंगमंच पर एक छोटा-सा प्रहसन और होना था, इसलिए काँग्रेसी पदग्रहण न कर सके और न उक्त कार्यक्रम ही असेम्बलियों में पेश किया जा सका। काँग्रेस ने पदग्रहण की इस शर्त पर ही इजाज़त दी थी कि गवर्नर विशेषाधिकारों का प्रयोग न करने का आश्वासन देदें। सरकार यदि इसे मान लेती तो प्रान्तीय शासन की रूपरेखा तैयार करते समय अपने हितों और प्रभुत्व की रक्षा करने के लिए बड़े-बड़े आला अंग्रेज़ राजनीतिज्ञों ने भारी जो मेहनत की थी, वह सब योंही बरबाद होती थी, और यदि वह आश्वासन न दें, तो सारी-की-सारी मेहनत––तीन-चार साल तक की की कराई पूरी योजना पर ही पानी फिरता था। सरकार चक्कर में पड़ गई। न हाँ करते बनता था, न ना करते। आखिर ब्रिटिश-सरकार ने समस्या को टालने की कोशिश की। गवर्नरों ने काँग्रेसी दलों के नेताओं को मंत्रिमण्डल बनाने के लिए बुलाया, लेकिन दस्तंदाज़ी न करने का वचन न दिया, फलतः उन्होंने मन्त्रिमण्डल बनाने से इन्कार कर दिया। नया विधान पैदा होने से पहले ही मर गया। गवर्नरों के सामने एक मार्ग यह था कि वे नये शासन-विधान को स्थगित कर देते, लेकिन यह तो स्पष्ट पराजय थी। इसके साथ ही भारत और ब्रिटेन के बड़े-बड़े राजनैतिक सूत्रधारों और राजनीति विशारदों में एक भारी विवाद छिड़ गया कि काँग्रेस की यह माँग वैधानिक है या नहीं। सरकार का कहना था

कि पार्लमेण्ट ने गवर्नरों को जो अधिकार दिया है, उससे वे (गवर्नर) कैसे इन्कार कर सकते हैं ? लेकिन काँग्रेसियों का कहना था कि अधिकारों का प्रयोग न करना उनकी इच्छा पर निर्भर है और बिना एक्ट बदले भी वे इस प्रकार का आश्वासन दे सकते हैं। विशेषाधिकारों का प्रयोग करने के लिए वे बाधित नहीं हैं। इस वैधानिक प्रश्न पर जो विवाद चला, उसमें इंग्लैण्ड के प्रसिद्ध विधानशास्त्री प्रो० कीथ ने काँग्रेस का प्रबल समर्थन किया। भारतमंत्री लार्ड ज़ैटलैण्ड,मि० बटलर, लार्ड स्टैनले, म० गांधी, भूलाभाई देसाई, सर तेजबहादुर सप्रू, श्री सत्यमूर्ति आदि ने इस विवाद में विशेष भाग लिया।

इधर यह विवाद होरहा था, उधर १ अप्रैल आगई। विधान आरम्भ होने का दिन आगया, उसे जारी न करना सरकार की स्पष्ट हार होती, इसलिए विधान के एक छिद्र का सहारा लेकर अल्पसंख्यक दलों के हाथ में ही शासन की बागडोर देकर अस्थायी मंत्रिमण्डल बनाये गये। पंजाब, बंगाल, आसाम, सिन्ध और सीमाप्रान्त में काँग्रेस का स्थायी बहुमत न था, इसलिए वहाँ तो बाक़ायदा मन्त्रि-मण्डल बन गये। लेकिन बम्बई, मद्रास, उड़ीसा, बिहार, मध्यप्रान्त और युक्तप्रान्त में अस्थायी मंत्रि-मण्डल बनाये गये। सारे देश में इनकी निन्दा होने लगी। इनपर असेम्बली के सदस्यों को कोई विश्वास न था, असेम्बली का अधिवेशन बुलाने पर इनपर अविश्वास का प्रस्ताव पास होना अनिवार्य था, इसलिए इन ६ प्रान्तों में असेम्बली ही नहीं बुलाई गई। लेकिन बकरे की माँ कबतक खैर मना सकती है ? ६ मास बाद असेम्बली को बुलाना क़ानूनन आवश्यक था। आखिर लार्ड ज़टलैण्ड के भाषणों में नरमी आई और वाइसराय, जो अबतक बिलकुल चुप थे, २७ जून को बोले। उन्होंने कहा कि शासन-चक्र चलाने के लिए काँग्रेस का यह माँग करना ज़रूरी न था। उन्होंने भारतीय जनता को यह विश्वास दिलाया कि गवर्नर न केवल मंत्रियों से छेड़छाड़ कर संघर्ष पैदा न करने के लिए, बल्कि ऐसे संघर्ष के अवसरों को बचाने की भी कोशिश करने के लिए उत्सुक रहेंगे। तीन मास तक कांग्रेस के अपनी बात पर अड़े रहने, अस्थायी मन्त्रि-मण्डलों के बहुत बदनाम होने और अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति के विषम होने से यह स्पष्ट प्रतीत होरहा था कि ब्रिटिश राजनीतिज्ञ भले ही प्रतिष्ठा के भय से स्पष्ट शब्दों में स्वीकार न करें, लेकिन वे अब काँग्रेस की बात मान लेंगे। जुलाई के प्रथम सप्ताह में वर्किंग-कमेटी की बैठक वर्धा में हुई। उसने लार्ड जटलैण्ड, लार्ड स्टैनले और लार्ड लिनलिथगो (वाइसराय) के वक्तव्यों को पूरा संतोषजनक न मानते हुए भी पदग्रहण करने की सलाह देदी, क्योंकि कमेटी की सम्मति में उपर्युक्त वक्तव्यों में काँग्रेस की इच्छा के समीप पहुँचने की कोशिश की गई थी और अब गवर्नरों के लिए अपने अधिकारों को प्रयोग में लाना आसान न रह गया था।

काँग्रेसी सरकारें

इस प्रस्ताव का पास होना था कि अस्थायी मंत्रिमण्डलों ने स्वयं इस्तीफ़े दे दिये। गवर्नरों ने फिर काँग्रेसी दलों के नेताओं को बुलाया और उनसे मंत्रिमण्डल बनाने का अनुरोध किया। परन्तु उनका ज़िक्र करने से पूर्व अस्थायी मंत्रिमण्डलों के बारे में यह न कहना उनके साथ अन्याय करना होगा कि देश-भर में तीव्र विरोध के होते हुए भी अस्थायी मंत्रिमण्डलों ने देश-हित की योजना बनाने की भरसक कोशिश की। उन्होंने काँग्रेस से मिलते-जुलते कार्यक्रम पेश करके लोकप्रिय बनने का प्रयत्न किया। शिक्षा, स्वास्थ्य, सार्वजनिक हित आदि के कार्यों की कई योजनायें बनाई गईं। यह ठीक है कि सम्पूर्ण देश में उनका प्रबल विरोध जहाँ इसकी प्रेरणा कर रहा था, वहाँ वे समय की बदली हुई गति को भी अनुभव करने लगे थे। नये शासन-विधान से मिले हुए अधिकारों का उपयोग करने की भी उन्हें उत्सुकता थी। यद्यपि वे काँग्रेस के विरोधी थे, तो भी यह मानना होगा कि उनका रुख़ काँग्रेस के प्रति बहुत असहानुभूतिपूर्ण नहीं रहा। वे अपनी आलोचनाओं के जवाब में यही कहते रहे कि काँग्रेसियों का असेम्बली में बहुमत है, इसलिए यदि वे शासनसूत्र हाथ में लेना चाहें तो वे उसी क्षण त्याग-पत्र दे देंगे; और काँग्रेस के तैयार होने पर उन्होंने ऐसा करने में देर नहीं की। बम्बई में श्री बी० जी० खर, मद्रास में श्री राजगोपालाचार्य, मध्यप्रान्त में डा० खरे, संयुक्तप्रान्त में पं० गोविन्दवल्लभ पन्त, बिहार में बाबू श्रीकृष्णसिंह और उड़ीसा में श्री विश्वनाथ दास ने प्रधानमंत्री का पद सम्हाल लिया।

इस समाचार से काँग्रेस के पदग्रहण-विरोधी क्षेत्रों में भले ही कुछ असंतोष हुआ हो, लेकिन आम लोगों में आनन्द और उत्साह का पारावार न रहा। सभी काँग्रेसी मंत्रियों ने शपथ-ग्रहण के बाद, असेम्बली के अधिवेशन के समय या ऐसे अन्य अवसरों पर वन्देमातरम् के राष्ट्रीय गीत, जनता की हर्षध्वनि और काँग्रेसी तिरंगे झण्डों का स्वागत किया। सरकारी समारोहों में वन्देमातरम् और राष्ट्रीय झण्डा सरकारी अधिकारियों व साधारण जनता की दृष्टि में ही नहीं, बहुत-से काँग्रेसी कार्यकर्ताओं के लिए भी आश्चर्य के विषय थे। इसके बाद गाँधी टोपी व खद्दर-धारी चप्पल पहने हुए मंत्रियों ने सैक्रेटेरियट के कर्मचारियों, पुलिस के अधिकारियों और सिपाहियों को नये युग का राष्ट्रीय संदेश सुनाया और बताया कि काँग्रेस का शासन जनपीड़न के लिए नहीं होगा, काँग्रेस जनहित के लिए शासनसूत्र हाथ में लेरही है। सरकारी कर्मचारियों को जनता के निकट-सम्पर्क में आना चाहिए। जनता को दिये गये संदेश में नये मंत्रियों ने अपनी कार्यनीति बताई और कहा कि चुनाव

के घोषणापत्र में प्रकाशित कार्यक्रम को पूरा करने की वे कोशिश करेंगे। दूर-दूर के गाँवों से देहाती किसानों ने आकर बड़ी-बड़ी सरकारी आलीशान इमारतों में, जिनके पास वे फटक भी न सकते थे, आकर अपने प्रतिनिधियों को सरकारी ओहदों पर बैठे हुए देखना शुरू किया। इससे वे समझने लगे कि अब उनके दुःखों की मुक्ति निकट आगई है। पिछले अफ़सर जनता से बहुत दूर रहते थे, उन्हें जनता देख तक न सकती थी, मिलने की तो बात ही दूर। नये काँग्रेसी मंत्री उनके देखे भाले थे, वे उन्हीं में से थे, उन्हीं में काम करते थे, उनके लिये जेल गये थे, तरह-तरह की तकलीफें बरदाश्त की थीं। कुछ ही समय बाद सीमाप्रान्त भी इन काँग्रेसी प्रान्तों की श्रेणी में आ गया। बात यह हुई कि ज्योंही सीमाप्रान्तीय असेम्बली का अधिवेशन बुलाया गया, काँग्रेस-पार्टी ने सर अब्दुल क़यूम के मंत्रिमण्डल पर अविश्वास का प्रस्ताव पेश कर डाला। अब्दुल क़यूम की सरकार बहुत ही कम बहुमत से सरकार बनी थी। अविश्वास के प्रस्ताव पर आठ ग़ैरकाँग्रेसी सदस्यों ने काँग्रेस का साथ दिया। इन आठ सदस्यों ने इस प्रतिज्ञा-पत्र पर भी हस्ताक्षर कर दिये कि हम असेम्बली में सदा काँग्रेस-पार्टी का पूरा साथ देंगे, क्योंकि हम काँग्रेस के कार्य-क्रम पर विश्वास करते हैं, हम सदा काँग्रेस-पार्टी के निर्णयों को मानेंगे, तथा उसके नियंत्रण में रहेंगे। इस स्थिति में गवर्नर के पास डा० खान साहब को सरकार बनाने के लिए बुलाने के सिवा और कोई चारा न था। इस तरह सीमाप्रान्त में भी काँग्रेसी सरकार बन गई। और सितम्बर १९३८ से आसाम में भी काँग्रेसी नेता श्री बारडोलाई के नेतृत्व में संयुक्त मंत्रिमण्डल बन गया है, जो काँग्रेस-वर्किंग-कमेटी के आदेशानुसार काम कर रहा है। मुस्लिम लीगी और यूरोपियन दल ने मिलकर इस मंत्रिमण्डल पर अविश्वास का प्रस्ताव पेश किया था, लेकिन यह उस अग्नि-परीक्षा में भी उत्तीर्ण सिद्ध हुआ। सिन्ध की सरकार भी काँग्रेस-पार्टी के थोड़े-बहुत प्रभाव में है। इस तरह आज ११ प्रान्तों में से बंगाल व पंजाब को छोड़कर सभी प्रान्तों में काँग्रेस प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शासन कर रही है। इन काँग्रेसी सरकारों ने जनता के लाभ के लिए क्या-क्या किया, यह लम्बी चर्चा करने से पहले सन् १९३७ की अन्य घटनाओं पर नज़र डाल लेना आवश्यक होगा।

अण्डमान के क़ैदी

इस वर्ष जिन समस्याओं ने देश का ध्यान ख़ास तौर से अपनी ओर खींचा, उनमें से एक थी अण्डमान के राजनैतिक कैदियों की समस्या। ३१ जुलाई को भारत-सरकार के एक वक्तव्य से सारे देश में तहलका-सा मच गया। इस वक्तव्य में कहा गया था कि अण्डमान की सेल्युलर जेल के २२५ कैदियों ने अपनी तकलीफ़ें दूर

कराने के लिए २४ जुलाई से भूख-हड़ताल करदी है। अण्डमान कालापानी के नाम से मशहूर है। इसका जलवायु निहायत ख़राब है। यहाँ मलेरिया वग़ैरा के फैलने से मौतें बहुत होती हैं। अण्डमान की जेल बीच में बन्द करदी गई थी, लेकिन कुछ समय से फिर राजनैतिक कैदियों के लिए खोल दी गई। यहां क़ैदी अपने देश, अपने रिश्तेदारों आदि से बिलकुल सम्बन्ध-विच्छेद करके रक्खे जाते हैं। तीन मास में एक पत्र से अधिक नहीं लिख सकते। तरह-तरह की और भी असुविधायें उन्हें वहाँ रहती थीं। जब राजनैतिक कैदियों ने इन दुःखों से छुटकारे का कोई उपाय न देखा, तब निराश होकर उन्होंने भूख-हड़ताल करदी। इस समाचार ने सारे देश को स्तब्ध कर दिया। बंगाल में तो सब जगह देश के इन २२५ वीर और देशभक्त युवकों के जीवन की रक्षा के लिए आन्दोलन शुरु होगया। बंगाल के बहुत-से नजरबन्दों ने भी उनकी सहानुभूति में भूख-हड़ताल कर दी। ९ अगस्त को सारे बंगाल में अण्डमान-दिवस मनाने का निश्चय हुआ। राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल ने इसे देशव्यापी रूप देकर समस्त भारत में यह दिवस मनाने का आदेश दिया। केन्द्रीय असेम्बली में इस प्रश्न पर सरकार की निन्दा का प्रस्ताव भी पास किया गया। सरकार का कहना था कि पहले भूख-हड़ताल समाप्त की जाय, फिर शिकायतें दूर की जावेंगी। कांँग्रेस वर्किंग कमेटी तथा देश की राजनैतिक संस्थाओं ने इन वीर क़ैदियों से अनशन छोड़ने की प्रार्थना की। कविवर रवीन्द्रनाथ ने भी उनसे प्रार्थना की। लेकिन कोई लाभ न हुआ। वे अपने निश्चय पर दृढ़ थे। अन्त में भारत के पितामह महात्मा गांधी के गम्भीर प्रयत्न से यह समस्या सुलझी। उन्होंने भारत-सरकार की मार्फ़त अण्डमान के क़ैदियों से भूख-हड़ताल छोड़ने की हृदयस्पर्शी प्रार्थना की। इसे वे ठुकरा न सके। उन्होंने हड़ताल समाप्त करने की सूचना देते हुए म० गांधी को यह भी लिखा कि "हममें से जो लोग हिंसा पर पहले विश्वास करते थे, वे अब उसपर विश्वास नहीं करते और यह मान गये हैं कि देश के राजनैतिक ध्येय को प्राप्त करने के लिए इस हथियार का अवलम्बन निरुपयोगी है। हम यह भी घोषणा करते हैं कि हिंसा या आतंकवाद देश को आगे लेजाने के बजाय पीछे ही ले जाता है।" उन्हीं दिनों बंगाल के नज़रबन्दों की रिहाई का सवाल भी खड़ा हो चुका था। नज़रबन्द और बंगाल के राजनैतिक क़ैदी भी हिंसा-मार्ग की उपयोगिता पर अब विश्वास छोड़ बैठे थे। उन्होंने भी अहिंसा की उपयोगिता पर खुले आम विश्वास की घोषणा कर दी थी। यह अहिंसा की कांँग्रेस-नीति की बहुत बड़ी विजय थी। अहिंसा के सच्चे पुजारी सरलहृदय म० गांधी का हृदय यह सुनकर प्रसन्नता से पूर्ण हो गया। वे अण्डमान के राजनैतिक क़ैदियों व नज़रबन्दों कीं रिहाई की कोशिश में लग गये। अण्डमान के सब राजनैतिक क़ैदी कुछ टुकड़ियों में धीरे-धीरे

भारत में वापस बुला लिये गये। गाँधीजी अस्वस्थ होते हुए भी कलकत्ता गये और बंगाल के गवर्नर व मंत्रिमण्डल से मिले। उनके प्रयत्नों के परिणामस्वरूप १९३७ के अन्त तक बंगाल-सरकार ने १५०० नज़रबन्दों को रिहा कर दिया और शेष पर भी विचार करने का आश्वासन दिया। १९३८ में भी बहुत-से रिहा किये गये। बाक़ी के सम्बन्ध में सरकार ने गाँधीजी की सलाह को मानने से इन्कार कर दिया। पंजाब के क्रान्तिकारी क़ैदियों ने भी बाद में भूख-हड़ताल की, लेकिन गांधीजी की प्रार्थना पर तोड़ दी। गाँधीजी ने उनकी रिहाई की भी कोशिश की। अब उनमें से कई रिहा हो चुके हैं।

जंज़ीबार की लौंग-समस्या

जंज़ीबार के लौंग-सत्याग्रह ने भी देश का ध्यान अपनी ओर खींचा। वहाँ बहुत-से प्रवासी भारतीय व्यापारी लौंग का व्यापार करते हैं। जंज़ीबार-सरकार ने एक नया बिल पेश किया, जिसके अनुसार लौंग का सारा व्यापार भारतीयों के हाथ से निकलकर सरकार या ब्रिटिश पूँजीपतियों के हाथ में चला जाता। जंजीबार के भारतीय व्यापारियों ने उसका खूब विरोध किया और व्यापार से बिलकुल हाथ खींचकर सत्याग्रह करने का निश्चय किया। काँग्रेस वर्किंग कमेटी ने २६ अप्रैल १९३७ की बैठक में इस बिल की निन्दा की और इसे १८८६ व १८९८ की संधियों के विरुद्ध बताया। इसके बाद भी कई बैठकों में इस प्रश्न पर विचार हुआ और १९३८ में तो बाक़ायदा लौंग-बहिष्कार का आन्दोलन जारी होगया। बड़े-बड़े शहरों में लौंग के गोदामों पर पिकेटिंग होने लगी। बन्दरगाहों पर लौंग की पेटियों को आये हुए सप्ताह होजाते, लेकिन कोई माल लेने वाला न मिलता। जंज़ीबार-सरकार इस घाटे को बरदाश्त न कर सकी, उसे समझौता करना पड़ा और तब मई १९३८ में बहिष्कार भी समाप्त होगया। प्रवासी भारतीयों के किसी प्रश्न पर काँग्रेस की यह पहली जीत होने के कारण काँग्रेस के इतिहास में इसका विशेष स्थान है।

गाँधी वाइसराय मुलाक़ात

गाँधी वाइसराय मुलाक़ात का यद्यपि बाहरी तौर पर कोई विशेष राजनैतिक परिणाम नहीं हुआ, फिर भी यह इस साल की एक विशेष घटना है। वाइसराय ने म० गाँधी को निजी परिचय बढ़ाने के लिए मिलने का निमंत्रण दिया था। महात्मा गाँधी ने इस अवसर का लाभ उठाकर सीमाप्रान्त के खान बन्धुओं पर लगाई गई पाबन्दी का विरोध किया। इसका फल यह हुआ कि कुछ समय बाद उनपर से सीमाप्रान्त न जाने की पाबन्दी उठा ली गई। ग्राम-सुधार और किसानों की स्थिति

पर भी ब्रिटिश सरकार के प्रतिनिधि वाइसराय और भारतीय जनता के महान् प्रतिनिधि गाँधीजी में काफ़ी विचार-विनिमय हुआ। वाइसराय के स्वयं गाँधीजी को निमंत्रण देने की अनेक क्षेत्रों में बहुत प्रशंसा की गई।

केन्द्रीय असेम्बली में

प्रान्तीय असेम्बलियों के चुनाव में काँग्रेस की कल्पनातीत विजय से केन्द्रीय असेम्बली में काँग्रेस-पार्टी और भी अधिक उत्साह से काम करने लगी। सरकारी नीति की बहुत-से कटौती-प्रस्तावों द्वारा निन्दा की गई। भारतीय व्यवसायों की ओर उदासीनता, भारतीयकरण में सुस्ती प्रवासी-भारतीयों की उपेक्षा, सीमाप्रान्त में दमननीति, सम्पूर्ण देश में दमननीति का जारी रखना, भारत के शासन की सामान्य-नीति जिसके कारण साधारण जनता उन्नति नहीं कर सकी, चीनी-कर की वृद्धि आदि पर कटौती-प्रस्ताव पास किये गये। एक प्रस्ताव द्वारा पोस्टकार्ड की क़ीमत भी दो पैसे नियत की गई। वाइसराय ने अपने अधिकार से ये सब निर्णय रद्द कर दिये। असेम्बली ने वाइसराय द्वारा प्रमाणित फ़ाइनेंस बिल को फिर गिरा दियां। एक भी निर्वाचित सदस्य ने सरकार का साथ न दिया। इण्डियन मेडिकल सर्विस के नये संगठन के अनुसार अंग्रेज़ अफ़सरों की संख्या वही रखने से भारतीयों की संख्या कम हो जाती थी और वेतन व भत्ते भी विदेशियों को अधिक मिलते थे, उसकी भी असेम्बली में खूब आलोचना हुई। पं० गोविन्दवल्लभ पन्त ने कहा था—"यह कहना सरासर ग़लत है और हिन्दुस्तान का भारी अपमान है कि उन विदेशियों के इलाज के लिए, जो बिना बुलाये बिना जरूरत भारत पर जबर्दस्ती लाद दिये हैं और जिनका ख़र्च भारत के कोष से दिया जाता है, विदेशों से और डाक्टर बुलाये जावें।"

दिल्ली में पुलिस द्वारा किये राष्ट्रीय झण्डे के अपमान की निन्दा का प्रस्ताव भी पास किया गया। शिमला-अधिवेशन में भी काँग्रेस-पार्टी ने खूब उत्साह से काम लिया। अण्डमानसम्बन्धी नीति व भारत में अंग्रेज़ विशेषज्ञों की गुप्त नियुक्ति पर निन्दा के प्रस्ताव पास हुए। जंजीबार के भारतीयों के प्रति भारतसरकार की उपेक्षा पर निन्दा का प्रस्ताव पेश किया गया, लेकिन मुस्लिम लीग के प्रधान श्री० जिन्ना के सरकार का साथ देने के कारण वह पास न हो सका।

कलकत्ते में अ० भा० कांग्रेस कमेटी

काँग्रेसी सरकारों के शासनसूत्र हाथ में लेते ही काँग्रेस के सामने अनेक नयी समस्यायें भी पैदा होगईं। अबतक वह केवल विदेशी सरकार की आलोचना करती

थी, लेकिन अब उसे कांग्रेसी सरकारों की नीति से असन्तुष्ट लोगों की आलोचना भी सुननी पड़ी। काँग्रेसी सरकारों के आलोचक दो प्रकार के थे। एक तो वे, जो पहले से ही काँग्रेस-विरोधी और अंग्रेज़ सरकार के सहयोगी थे। इनकी आलोचना में कोई ज़ोर न था, क्योंकि काँग्रेस इनसे बहुत कदम आगे थी। दूसरे थे वे गरम-दली, जो काँग्रेस की नीति से भी बहुत आगे तेज़ी से बढ़ना चाहते थे। काँग्रेसी सोशलिस्ट काँग्रेस में रहते हुए भी काँग्रेस की प्रगति से संतुष्ट न थे। वे एकदम क्रान्ति करने के उत्सुक थे। इनकी आलोचनाओं का एक परिणाम यह हो सकता था कि काँग्रेस में ही फूट पड़ जाय। लाल झण्डे व तिरंगे झण्डे, किसान सभा व काँग्रेस-कमेटियों के रूप में यह संघर्ष खूब बढ़ रहा था। बरमा और मलाया आदि के दो सप्ताह के प्रभावशाली दौरे के बाद जब राष्ट्रपति नेहरू भारत में लौटे तब उनके पास ऐसी शिकायतों का ढेर लग गया, जिनमें काँग्रेस कमेटियों व किसान-सभाओं ने एक-दूसरे के विरुद्ध जहर उगला था। राष्ट्रपति ने एक लम्बे वक्तव्य में स्थिति पर प्रकाश डालते हुए किसान कार्यकर्ताओं को आदेश दिया था कि वे देश की सर्वोच्च संस्था काँग्रेस की प्रतिष्ठा को नुक्सान न पहुँचावें। किसानों व मजदूरों के संगठन के अधिकार को स्वीकार करते हुए भी उन्हें सलाह दी गई कि काँग्रेस का विरोध उनके अपने आन्दोलन को नष्ट करेगा, क्योंकि काँग्रेस की कमज़ोरी सारे देश की सभी श्रेणियों की कमज़ोरी है। इस वक्तव्य के बाद भी स्थिति में विशेष सुधार न हुआ। किसान कार्यकर्ता काँग्रेसी सरकारों की आलोचना बराबर करते रहे। इस तथा अन्य अनेक प्रश्नों पर कलकत्ते में होनेवाली आल इण्डिया काँग्रेस कमेटी की बैठक में खूब विचार हुआ। यह बैठक २९-३० और ३१ अक्तूबर को कलकत्ते में हुई थी। तिलक स्वराज्य फ़ण्ड को काँग्रेस के साधारण कोष में डालने, श्री मणिलाल कोठारी की मृत्यु पर शोक प्रकाश करने, कविवर रवीन्द्रनाथ के स्वास्थ्य-सुधार पर बधाई, काँग्रेस वर्किंग कमेटी के पदग्रहण के प्रस्ताव का समर्थन करने, चीन पर जापान के आक्रमण की निन्दा करने, मिदनापुर में अभीतक भी ११० काँग्रेस कमेटियों पर लगी पाबन्दी की निन्दा करने, राजनैतिक कैदियों व नजर बंदों को शीघ्र रिहा करने, बंगाल व पंजाब में दमन की निन्दा करने, देश-निर्वासित भारतीयों पर से पाबन्दी उठाने, जंजीबार की लौंगों के बहिष्कार का समर्थन, फिल-स्तीन में ब्रिटिश सरकार के दमन की निन्दा, मुजफ्फरनगर व मेरठ को दिल्ली प्रान्त से अलग करने, रुई की कीमत एकदम कम होजाने के कारण मिल-मालिकों से भारतीय रुई खरीदने व रुई कमेटी नियुक्त करने के प्रस्ताव वर्किंग कमेटी ने पेश किये और ये सभी पास होगये। संघ-विधान के सम्बन्ध में सभी काँग्रेस कमेटियों व प्रान्तीय असेम्बलियों की काँग्रेसी-पार्टियों को आज्ञा दी गई कि वे संघ-विधान का

विरोध करें। इसी प्रस्ताव के अनुसार प्रान्तों की असेम्बलियों में कांग्रेसी सरकारों ने फ़ेडरेशन-विरोधी प्रस्ताव पेश किये थे। मद्रास में कांग्रेस-सरकार ने एक सोशलिस्ट कार्यकर्ता श्री बाटलीवाला को हिंसात्मक भाषण देने के अपराध में गिरफ्तार कर लिया था। १२४ ए और १४४ धारा का प्रयोग भी कुछ कांग्रेसी सरकारों ने किया था। इसके विरुद्ध सोशलिस्टों में बहुत असंतोष था। इस पर काफ़ी गरमागरम बहस के बाद यह विषय वर्किंग कमेटी को सौंप दिया गया। प्रान्तीय सरकारों से ज़ब्त पुस्तकों पर से पाबन्दी उठाने, सरकार द्वारा दिये गये खिताबों व तमगों की प्रथा बन्द करने की प्रार्थना करने और भाषा-क्रम से प्रान्तों के पुनर्विभाजन पर ग़ैरसरकारी प्रस्ताव पेश हुए, जो पास होगये। मैसूर में नागरिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए किये गये आन्दोलन के दमन की तीव्र निन्दा की गई और वहाँ की जनता को बधाई दी गई। यह प्रस्ताव पीछे से वर्किंग कमेटी में म० गाँधी के समझाने से वापस ले लिया गया। इन्हीं दिनों वर्किंग कमेटी ने बम्बई के प्रसिद्ध नेता श्री नरीमान पर अनुशासन की कार्रवाई की और उन्हें कांग्रेस में किसी भी जिम्मेदारी के पद के अयोग्य ठहरा दिया। इसका कारण यह था कि उन्होंने जाँच-कमेटी रिपोर्ट और क्षमा-प्रार्थना के बाद फिर अपना वक्तव्य बदल दिया था। उनपर अभियोग यह था कि उन्होंने सन् १९३४ में केन्द्रीय असेम्बली के चुनाव में कांग्रेसी उम्मीदवार को उचित सहायता न दी थी। इसी कारण उन्हें बम्बई-असेम्बली की कांग्रेस पार्टी का नेता न चुना गया था। इसपर श्री नरीमान के साथियों ने आन्दोलन किया और इसी सिलसिले में १९३४ के चुनाव का प्रश्न सामने आया।

कांग्रेसी सरकारों का शासन

कांग्रेसी सरकारों ने शासनसूत्र हाथ में लेते ही बहुत उत्साह व ज़ोर के साथ सुधार करने शुरू कर दिये। कांग्रेस वर्किंग कमेटी के आदेशानुसार मंत्रियों ने अपना वेतन ५००) रु० तथा २५०) रु० मोटर व मकान भत्ता प्रतिमास से अधिक न लेना निश्चित किया, जबकि ग़ैर कांग्रेसी मंत्री २५०० और ३००० रु० से भी ऊपर वेतन ले रहे थे। सबसे पहले कांग्रेसी सरकारों का ध्यान नागरिक स्वाधीनता की ओर गया। सभी प्रान्तों में राजनैतिक कैदी रिहा किये जाने लगे, राजनैतिक कार्यकर्ताओं पर से सब पाबन्दियाँ उठाई जाने लगीं, कुछ अखबारों की तो ज़ब्त जमानतें भी वापस दे दी गई। बारडोली आदि के सत्याग्रह के समय जब्त और बेच दी गई जमीनें भी वापस दिलाई जारही हैं, सार्वजिनक सभाओं के भाषणों की खुफ़िया पुलिस द्वारा रिपोर्ट लेने की प्रथा बन्द करदी गई। राजनैतिक संस्थाओं, फिल्मों और पुस्तकों पर से पाबन्दियाँ उठाई जाने लगीं। मोपला कैदी और युक्तप्रांत में क्रान्ति-

कारी काकोरी क़ैदी तक रिहा कर दिये गये। राष्ट्र के शासन-व्यय को कम करने की ओर विशेष ध्यान दिया गया। मंत्रियों ने अपने वेतन व भत्ते जहाँ कम किये, वहाँ असेम्बली के सदस्यों का भत्ता भी कम रक्खा गया। सिर्फ़ बम्बई में ही इस कारण मंत्रियों के मद में २० लाख रु० की बचत की गई। बजट में अनेक प्रान्तों को सार्वजनिक हित के कार्यों में और विशेषकर ग्राम-सुधार पर बहुत अधिक व्यय करने के कारण कुछ घाटा ज़रूर हुआ, लेकिन बहुत नहीं। काँग्रेसी सरकारें जनता के उपयोगी कामों में कितना व्यय कर रही हैं, इसका एक ही उदाहरण देना पर्याप्त होगा। युक्तप्रांत सरकार ने निम्न मदों के लिए नीचे लिखी रक़में मंजूर कीं:—

ग्राम-सुधार—१० लाख रु०, ग्राम पुस्तकालय २० लाख रु०, बड़े शहरों में शुद्ध दूध—२० लाख रु०, शुद्ध घी उत्पत्ति—१२॥ लाख रु०, खेती की उन्नति—५।॥ लाख रु०, खद्दर-व्यवसाय की उन्नति—१। लाख रु०, मज़दूर वेलफ़ेयर—१० हजार रु०, डाक्टरी सहायता—१॥ लाख रु०, व्यावसायिक उन्नति—१ लाख रु०। किसानों को सभी प्रान्तों में छूट दी गई, बकाया की वसूली, कुर्की आदि रोक दी गई। अब प्रायः सभी प्रान्तों में किसानों के लिए नये-नये कानून बन रहे हैं। इन नये कानूनों से किसानों की अवस्था में क्रान्तिकारी परिवर्तन हो जायगा। इन बिलों के क़ानून बनने में सरकार को जमींदारों का तीव्र विरोध सहना पड़ रहा है, लेकिन काँग्रेसी सरकारें तो जनता की हैं, जनता का शोषण नहीं सहन कर सकतीं। कुछ प्रान्तों में कुछ कानून बन चुके हैं और कुछ में अभीतक बिल क़ानून नहीं बन सके। किसानहित के नये-नये बिल भी तैयार किये जा रहे हैं। नये विधान के अनुसार प्रान्तीय सरकारों की शक्ति सीमित है। वे अपनी इच्छानुसार व्यय में कमी नहीं कर सकतीं और इसीलिए टैक्सों का भार बहुत कम नहीं किया जा सकता, फिर भी काँग्रेसी सरकारें अपने सिद्धान्तों पर दृढ़ हैं। शराबबन्दी काँग्रेस का एक महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम रहा है, अब शराब की आय को अर्थाभाव के बहाने से बर्दाश्त नहीं किया जा सकता था। इसलिए सभी प्रान्तों में काँग्रेसी सरकारों ने इधर विशेष ध्यान दिया। एकदम सारे प्रान्तों में शराबबन्दी तो नहीं हुई, लेकिन प्रत्येक प्रान्त के कुछ भागों में शराबबन्दी जारी कर दी गई। दूसरे वर्ष १९३८ में शराबबन्दी का क्षेत्र भी विस्तृत कर दिया गया है। इससे भी लाखों रुपये की हानि काँग्रेसी सरकारों को हुई। साधारण शासन-प्रबन्ध में भी सुधार की ओर ध्यान दिया जा रहा है। रिश्वतखोरी व जनता की अन्य बहुत-सी असुविधायें दूर करने, जेलों की अवस्था सुधारकर क़ैदियों से मनुष्यतापूर्ण व्यवहार करने की भी कई योजनायें चालू की जा रही हैं। हिन्दी या हिन्दुस्तानी को राष्ट्रभाषा मानकर इसकी भी पढ़ाई अनिवार्य की जारही है।

: ३ :

हरिपुरा-कांग्रेस और उसके बाद

वैधानिक-संकट

कांँग्रेस प्रान्तों में शासनचक्र ज़रूर चला रही थी, लेकिन उसका उद्देश्य नये शासन-विधान को सफल करना नहीं था। वह तो अपनी शक्ति बढ़ाने तथा शासन-विधान का मुकाबिला करने के लिए कुर्सियों पर बैठी थी, और इसमें सन्देह नहीं कि ये दोनों कार्य सिद्ध हो रहे थे। काँग्रेस की ताक़त खूब बढ़ रही थी। लोग यह महसूस कर रहे थे कि अब हम खुद राज्य करने लगे हैं, जगह-जगह काँग्रेसी कार्यकर्ता सरकारी अधिकारियों को सहयोग देने लगे थे। शासन-विधान को उसी अर्थ में चलाना आवश्यक नहीं है, जिस इरादे से सरकार ने बनाया है—यह कहकर गाँधीजी ने इस बात की छुट्टी दे दी थी कि विधान की धाराओं का अपने अनुकूल अर्थ निकालने में कोई आपत्ति नहीं है। इसीलिए धारा-सभाओं में अंग्रेजी पर प्रान्तीय भाषाओं को तरजीह दी जाने लगी थी। सरकार कबतक यह चुपचाप सहन करती ? उसने एक बार फिर अपनी शक्ति को आजमाने का निश्चय किया। काँग्रेस की आज्ञानुसार मंत्री राजनैतिक कैदियों को रिहा कर रहे थे, बहुत से क़ैदी छोड़ भी दिये गये थे, लेकिन कुछ क़ैदियों की रिहाई में यू० पी० और बिहार के गवर्नरों ने रुकावट डालनी शुरू की। इधर देश में राजनैतिक क़ैदियों की रिहाई में विलम्ब होने पर काँग्रेस मंत्रि-मण्डलों के विरुद्ध असन्तोष बढ़ रहा था। काँग्रेस अपने चुनाव घोषणा-पत्र में राजनैतिक क़ैदियों की रिहाई की नीति को स्वीकार कर चुकी थी। जब बार-बार कहने पर भी गवर्नर मंत्रियों के काम में दख़ल देने से बाज न आये, तब युक्तप्रान्त और बिहार के मंत्रिमण्डलों ने इस्तीफा दे दिया। हरिपुरा-काँग्रेस के एक प्रस्ताव के अनुसार, काँग्रेस की स्थिति यह थी—"जिस समय गवर्नरों ने काँग्रेस के प्रतिनिधियों को मंत्रि-मण्डल बनाने का निमन्त्रण दिया था, उन्हें मालूम था कि काँग्रेस के घोषणा-पत्र में नीति के प्रधान अंग के रूप में राजनैतिक क़ैदियों की रिहाई का उल्लेख किया गया है।...... काँग्रेस की राय में कैदियों की रिहाई का मामला प्रतिदिन के शासन-क्षेत्र की सीमा के भीतर ही आता है और यह ऐसा मामला नहीं है कि जिसमें गवर्नर से किसी लम्बी-चौड़ी बहस की ज़रूरत हो। गवर्नर का काम मंत्रियों को सलाह देना

और उनकी रहनुमाई करना है। उनका काम प्रतिदिन के कर्तव्य-पालन में मंत्रियों के फैसलों के कार्यान्वित होने में बाधा डालना नहीं है।.........काँग्रेस की राय में इन प्रान्तों के प्रधान मंत्रियों के निर्णयों में गवर्नर ने जो हस्तक्षेप किया है, वह केवल पहले दिये हुए आश्वासन के ही विरुद्ध नहीं है, बल्कि गवर्नमेण्ट ऑफ़ इण्डिया एक्ट की धारा १२६/५ का दुरुपयोग भी है। इसमें अमन-अमान को भारी ख़तरा पहुँचाने का कोई सवाल ही न था।"

यह नाज़ुक परिस्थिति ठीक ऐसे समय हुई, जबकि काँग्रेस का हरिपुरा-अधिवेशन शुरू होने को था। इसलिए इसके विस्तार में जाने से पहले इस अधिवेशन से पहले की दो-तीन और घटनाओं का भी संक्षेप से निर्देश कर देना आवश्यक है। वर्त्तमान शिक्षापद्धति के दोषों को प्रायः सभी शिक्षा-शास्त्री स्वीकार करते हैं। महात्मा गाँधी ने भी इस विषय पर बहुत मनन किया और एक नई पद्धति का विचार देश के सामने रखा। उसपर विचार करने के लिए अक्तूबर १९३७ में भारत के बहुत-से शिक्षा-शास्त्रियों की काँफ्रेंस वर्धा में की गई, जिसके सभापति स्वयं महात्मा गाँधी थे। इस शिक्षा का मुख्य उद्देश्य किसी शिल्प को केन्द्र में रखकर विद्यार्थी को साधारण प्रारम्भिक शिक्षा देना तय हुआ। इस योजना के विस्तार में न जाकर इतना ही कहना काफ़ी है कि आज बहुत-से प्रान्तों में वर्धा-शिक्षा के अनुसार कार्य का श्रीगणेश कर दिया गया है।

मुस्लिमलीग से चर्चा

मुस्लिम-लीग के प्रधान श्री जिन्ना तथा अन्य कुछ मुस्लिमलीगी नेताओं ने काँग्रेस के विरुद्ध आक्षेप करने शुरू किये थे। काँग्रेस को हिन्दू-संस्था कहकर वे भारत के मुसलमानों को काँग्रेस के बरख़िलाफ़ भड़का रहे थे। अनेक नई माँगें पेश की गईं, 'वन्देमातरम्'-गीत को, जिसपर अबतक कोई आपत्ति न उठाई गई थी और जो गीत स्वयं मुस्लिम काँग्रेसी नेताओं द्वारा गाया जाता रहा है, अब इस्लाम-विरोधी कहा जाने लगा। काँग्रेस द्वारा हिन्दुस्तानी भाषा के प्रचार को भी हिन्दूपन का प्रचार कहा जाने लगा। इसपर राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू ने व्यर्थ की बहस में न पड़कर मुस्लिम-लीग की माँगों पर शान्ति से विचार प्रकट करने की इच्छा की। आपस में पत्रव्यवहार शुरू हुआ, जो हरिपुरा-काँग्रेस के बाद नये राष्ट्रपति श्री सुभाषचन्द्र बोस ने जारी रखा। म० गाँधी ने भी श्री जिन्ना से पत्र-व्यवहार किया और स्वयं अस्वस्थ होते हुए भी बम्बई जाकर श्री जिन्ना से उनके घर पर मिले। श्री जिन्ना शायद समझौते के उत्सुक न थे, इसलिए निश्चित प्रश्नों को छोड़कर इस बात पर ज़ोर देने लगे कि काँग्रेस हिन्दू-संस्था है और वह मुस्लिमलीग को ही समस्त मुसलमानों की एकमात्र प्रतिनिधि मानकर उससे बात करे। काँग्रेस इस साम्प्रदायिक स्थिति को मान लेती,

तो उसके अबतक के सारे किये-किराये पर पानी फिर जाता। वह तो सारे देश की प्रतिनिधि है, उसके झण्डे-तले हज़ारों मुसलमान इकट्ठे होकर जेल गये हैं, गोलियाँ खा चुके हैं, कई मुसलमान उसके सभापति तक हो चुके हैं, सीमाप्रान्त के खुदाई खिदमतगारों का त्याग, तपस्या और बलिदान काँग्रेस के नियन्त्रण पर ही हुआ था। काँग्रेस इस स्थिति को छोड़ नहीं सकती थी, फलतः बातचीत बिना किसी परिणाम पर पहुँचे ही ख़त्म हो गई।

इस साल भी राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल नेहरू ने उत्साह और परिश्रम से काम किया। जंजीबार-दिवस (२१ जून) ,चीन-दिवस (२६ सितम्बर), नवविधानविरोधी-दिवस, (१ अप्रैल), अण्डमान-दिवस, स्वतन्त्रता-दिवस (२६ जनवरी), सीमाप्रान्त दिवस (२२ मई) आदि कई दिन मनाये गये। भिन्न-भिन्न समस्याओं पर राष्ट्रपति ने वक्तव्य प्रकाशित किये। आर्थिक और वैदेशिक विभाग भी इस साल अधिक संगठित होजाने के कारण उत्साह से अपना काम करते रहे। भिन्न-भिन्न ग़ैरकाँग्रेसी प्रान्तों व रियासतों में दमन-चक्र बराबर चल रहा था, कार्यकर्ता गिरफ्तार किये जा रहे थे, उनपर पाबन्दियाँ लगाई जा रही थीं और पत्रों की ज़मानतें ज़ब्त हो रही थीं। नागरिक स्वाधीनता-संघ (सिविल लिबर्टी यूनियन) इन सब घटनाओं की सूचनायें बराबर प्रकाशित करता रहा।

हरिपुरा-काँग्रेस

पद-ग्रहण से काँग्रेस की शक्ति एकाएक बढ़ जाने से प्रतिनिधियों के चुनाव में बहुत कशमकश हुई। बिहार में तो किसान-सभावादियों और काँग्रेसियों में बड़ा झगड़ा होगया। किसान-सभावादी, काँग्रेसी सोशलिस्ट और काँग्रेसी सरकारी नीति के समर्थकों ने काँग्रेस पर अधिकार करने की पूरी कोशिश की। कुछ लोगों का रवैया ऐसा होरहा था कि उनके विरुद्ध काँग्रेस को अनुशासन की भी कार्रवाई करनी पड़ी। इन दिनों वातावरण इतना दूषित हो रहा था और वैमनस्य इस चरम सीमा तक पहुँच गया था कि हरिपुरा-काँग्रेस में दो दल होने की पूरीं सम्भावना की जा रही थी, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। इसका श्रेय है यू० पी० व बिहार के गर्वनरों को, जिन्होंने ऐसी नाज़ुक परिस्थिति पैदा कर दी, जिससे मंत्रिमण्डलों को इस्तीफ़ा देना पड़ा जिसका उल्लेख हम पहले कर आये है।

बारडोली इलाके के हरिपुरा गाँव में इस साल १९ से २१ फ़रवरी तक काँग्रेस का अधिवेशन हुआ। राष्ट्रपति-पद के लिए चुने गये श्री सुभाषचन्द्र बोस। पिछले बहुत-से सालों से सरकार उन्हें बराबर देश से निर्वासन या जेल की सज़ा दे रही थी। सरकार उन्हें इतना ख़तरनाक समझती थी कि कई सालों तक रोगी और निर्वासित

रहने के बाद ज्योंही उन्होंने भारतभूमि पर पैर रक्खा, वे एकदम गिरफ्तार कर लिये गये। पीछे स्वास्थ्य बहुत ख़राब हो जाने पर वे रिहा किये गये थे। हरिपुरा-काँग्रेस गाँव में होनेवाली दूसरी काँग्रेस थी, इसलिए फैज़पुर से पूरा अनुभव उठाया गया। दर्शकों व प्रतिनिधियों के लिए सब प्रकार की सहूलियतों का प्रबन्ध किया गया। इससे हज़ारों गाँववालों को रोज़ी मिली। राष्ट्रपति का जलूस ५१ बैलोंवाले रथ पर निकाला गया। रथ भी ८० साल पुराना लिया गया। राष्ट्रपति ने अपने भाषणों में देश की प्रायः सभी समस्याओं पर अपने विचार प्रकट किये। पिछले राष्ट्रपति पं० जवाहर-लाल नेहरू ने अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के प्रति भारतीयों में एक खास दिलचस्पी पैदा कर दी थी। श्री सुभाष बोस ने भी अपने भाषण में अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति की खूब चर्चा की। आपने ब्रिटिश साम्राज्य की पतनोन्मुखता का ज़िक्र करते हुए कहा कि "आज ब्रिटिश साम्राज्य का इतिहास उस स्थान पर पहुँचा है, जहाँसे उसका रुख पलट सकता है। या तो इसकी वही गति होगी जो दूसरे साम्राज्यों की हुई है, या इसे अपना कायापलट करके अपनेको स्वतंत्र राष्ट्रों का संघ बनाना पड़ेगा। यह चाहे जो मार्ग पकड़ ले। १९१७ ई० में ज़ार का साम्राज्य मिट्टी में मिल गया और उसके खण्डहरों पर रूस के पंचायती साम्यवादी प्रजातंत्रों के संघ की इमारत खड़ी हुई।" राष्ट्रपति ने ब्रिटेन को चेतावनी देते हुए कहा—"अब भी समय है कि ब्रिटेन रूस के इतिहास के इस पन्ने से सबक़ ले। सवाल तो यह है कि क्या वह कुछ शिक्षा ग्रहण करेगा ?"

"प्रत्येक साम्राज्य की नींव भेदनीति पर है, किन्तु ब्रिटिश साम्राज्य के सिवा और किसी साम्राज्य ने इस नीति का इस ख़ूबी, सुव्यवस्था और धड़ल्ले के साथ पालन किया हो, इसमें मुझे सन्देह है।" पर "ऐसा जान पड़ता है कि इन सबके परिणाम-स्वरूप ग्रेट ब्रिटेन अपने ही बिछाये हुए जाल में फँस गया है। भारत में वह हिन्दुओं या मुसलमानों में से किसे संतुष्ट करेगा ? फिलस्तीन में अरबों या यहूदियों में से किसे अपनायगा ? अथवा ईराक में अरबों और कुर्दों में से किनपर दया-दृष्टि करेगा ? मिस्र में वह राजा का पक्ष लेगा या वफ्द का ? साम्राज्य के बाहर भी वह इसी चक्कर में है; वह स्पेन में फ्रैंको की पीठ ठोके या नियमित सरकार की ? यूरो-पीय राजनीति के विस्तृत क्षेत्र में वह जर्मनी का साथ दे या फ़्रांस का ?"

"आज ब्रिटेन मुश्किल से अपने को समुद्रों की रानी कह सकता है। १८वीं और १९वीं सदी में सामुद्रिक शक्ति के कारण ही उसकी उन्नति हुई। विश्व के इतिहास में एक नये साधन हवाई शक्ति का प्रादुर्भाव बीसवीं सदी में उसके साम्राज्य के पतन का कारण होगा। युद्ध के इस नये साधन—हवाई ताक़त—के कारण ही उद्धत इटली भूमध्यसागर में एकत्र सारी ब्रिटिश जल-सेना को ललकार सका।.........एक

भीमकाय साम्राज्य का दुनिया के सामने आज इस तरह पर्दा फ़ाश हुआ है, जैसा उसके पहले कभी नहीं हुआ था। दुनिया की शक्तियों की इस गुत्थमगुत्था में भारत पहले से कहीं अधिक शक्तिशाली बन गया है।" अल्पसंख्यकों की समस्या का ज़िक्र करते हुए आपने यह कहकर सभी काँग्रेसकर्मियों के भावों को व्यक्त किया कि "हम राष्ट्रीयता के मूल सिद्धान्तों को हनन न करते हुए इस समस्या का हल करने की भरसक कोशिश करने को उत्सुक हैं।.........राष्ट्रीय महासभा तो सारी भारतीय जाति के समान राजनैतिक और आर्थिक अधिकारों की रक्षा के लिए लड़ रही है। वह किसीके विवेक, धर्म, संस्कृति के सम्बन्ध में पूर्ण तटस्थ रहेगी।"

देश के सामने उपस्थित सबसे बड़ी समस्या संघ-विधान को आपने खूब आड़े हाथों लिया। आपने कहा कि "देशवासियों को यह याद दिला देना ज़रूरी है कि सत्याग्रह या अहिंसात्मक असहयोग का प्रयोग हमें शायद फिर करना पड़े। प्रान्तों में पद-ग्रहण करने का यह अर्थ नहीं है कि हम केन्द्र में भी पद-ग्रहण कर लेंगे। बहुत सम्भव है कि हमारे ऊपर ज़बरदस्ती संघ-शासन की व्यवस्था लादने का विरोध करने का हमारा निश्चय भद्र-अवज्ञा आन्दोलन की पुनरावृत्ति करने को विवश करे।" अब काँग्रेस सात प्रान्तों में शासनसूत्र चला रही थी, इसलिए राष्ट्रपति का भाषण भी सिर्फ़ आन्दोलन या संग्राम की चर्चा से भिन्न रचनात्मक क्षेत्र में भी जाना स्वाभाविक था। आपने राष्ट्र के पुनर्निर्माण की संक्षिप्त योजना पर काफ़ी ज़ोर दिया और आर्थिक समस्याओं पर रोशनी डालते हुए कहा कि अब हमें स्वाधीन भारत की परिभाषा में सोचना शुरू कर देना चाहिए। काँग्रेस वर्किंग कमेटी को अपनेको स्वाधीन भारत के मन्त्रिमण्डल की प्रतिमूर्ति समझकर सब समस्याओं पर विचार करना चाहिए।

हरिपुरा-काँग्रेस में विषय तो बहुत-से पेश हुए, लेकिन बिहार और युक्तप्रान्त के वैधानिक संकट की चर्चा ने बाक़ी सब बातों को पीछे छोड़ दिया। तीसरी शक्ति विदेशी सरकार से फिर सम्मिलित संग्राम की चर्चा में काँग्रेस के वामपक्ष और दक्षिण-पक्ष के पारस्परिक विरोध की चर्चा भी दब गई। इस प्रश्न पर जो प्रस्ताव पास हुआ, उसका कुछ अंश हम ऊपर दे चुके हैं। इसी प्रस्ताव में आगे कहा गया था कि काँग्रेस अभी सत्याग्रह आदि की विकट परिस्थिति पैदा नहीं करना चाहती और इसलिए अन्य प्रान्तों में मंत्रिमण्डलों को इस्तीफ़ा देने के लिए आदेश नहीं करती। गवर्नर-जनरल से इस विषय पर पुनर्विचार करने की प्रार्थना भी की गई। गवर्नरों के इस हस्तक्षेप से नये विधान की सारहीनता प्रकट होती है, यह कहकर कांस्टिटयूएण्ट असेम्बली की माँग फिर पेश की गई। अहिंसा पर पुनः विश्वास और राजनैतिक क़ैदियों से रिहाई के लिए भूख-हड़ताल आदि न करने की भी प्रार्थना इस प्रस्ताव में की गई थी और अन्त में वर्किंग कमेटी को आवश्यक होने पर यथोचित कार्रवाई

करने का अधिकार दिया गया था। अनेक उग्र विचारकों ने इसी प्रश्न पर तत्काल सब प्रान्तों में वैधानिक संकट पैदा करने व सत्याग्रह शुरू करने की सलाह दी, लेकिन बहुमत ने अभी इसकी आवश्यकता नहीं समझी। श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, सर जगदीशचन्द्र वसु श्री शरत्चन्द्र चटर्जी, श्री मणिलाल कोठारी आदि की मृत्यु पर शोक, आसाम की बहादुर नागा महिला की रिहाई की माँग, ब्रिटिश गाइना के भारतीयों को वहाँ बसने की शताब्दि पर बधाई, सरकारी औपनिवेशिक नीति की निन्दा, जंजीबार के लौंग-सत्याग्रह पर बधाई, लंका के भारत-विरोधी कानूनों की निन्दा, चीन पर जापान के आक्रमण की निन्दा और चीन से सहानुभूति, सरकार की फिलस्तीन-नीति की निन्दा, भावी विश्वव्यापी युद्ध में भाग न लेने का निश्चय, वर्जित क्षेत्रों और कमिश्नर के सूबों में प्रजातन्त्र की माँग, अजमेर-मेरवाड़े के गाँव रियासतों को देने पर क्रोध, फेडरेशन की योजना का विरोध, राष्ट्रीय शिक्षा के सिद्धान्त को स्वीकार कर शिक्षा- बोर्ड की स्थापना, अल्पसंख्यक जातियों के अधिकारों की घोषणा, केनिया में भारत-विरोधी नीति की निन्दा और मिदनापुर में काँग्रेस-कमेटियों पर पाबन्दी की निन्दा के प्रस्ताव पास किये गये। दो प्रस्तावों पर बहुत गरमागरम बहस हुई। इनमें से एक प्रस्ताव था रियासतों के सम्बन्ध में, जिसका आशय यह था कि रियासतें भारत का ही एक अंग हैं, उनमें भी पूरी ज़िम्मेदार सरकार चाहिए। इस उद्देश्य को पूरा करना काँग्रेस का अधिकार है, यह मानते हुए भी मौजूदा हालत में काँग्रेस के रियासतों में काम करने में बहुत-सी कठिनाइयाँ हैं। काँग्रेस वहाँ राष्ट्रीय झण्डे का अपमान नहीं सह सकती। लेकिन काँग्रेस प्रजा द्वारा उठाये गये प्रत्येक अहिंसात्मक आन्दोलन का स्वागत करेगी। व्यक्तिगत रूप से कोई भी काँग्रेसी रियासती आन्दोलन में भाग ले सकता है, लेकिन काँग्रेस के नाम से कोई आन्दोलन नहीं चलाया जा सकता। इसके लिए रियासतों में पृथक् संगठन क़ायम होने चाहिएँ। दूसरा प्रस्ताव किसानों के सम्बन्ध में था। काँग्रेस किसानों के संगठन के अधिकार को मानती है, लेकिन वह स्वयं भी मुख्यतः किसानों की ही संस्था है, वह हमेशा किसानों की तरफ़दार रही है और रहेगी, इसलिए गाँव-गाँव में किसानों को उसे और भी आधिक प्रबल बनाने के लिए उसके सदस्य बनना चाहिए और कोई ऐसा काम न करना चाहिए जिससे काँग्रेस कमज़ोर हो। किसानों के संगठन का अधिकार मानते हुए भी वह काँग्रेस के मूलभूत सिद्धान्तों के विरुद्ध किसी कार्रवाई से सम्बन्ध नहीं रखती और जहाँ-जहाँ काँग्रेसवादी ऐसे काम कर रहे हों, जिनसे काँग्रेस की नीति व सिद्धान्त के विरुद्ध वातावरण पैदा होता हो, वहाँ प्रान्तीय काँग्रेस कमेटियों को उचित कार्रवाई करने का आदेश और अधिकार देती है। इन दोनों प्रस्तावों की रचना पर उग्रदली बहुत असंतुष्ट हुए। वे जहाँ रियासतों में हस्तक्षेप को सामयिक और आव-

श्यक मानते थे, वहाँ किसान-सभाओं के सम्बन्ध में भी कोई बन्धन न चाहते थे। लेकिन प्रस्ताव पास होगये और पीछे की घटनाओं ने यह बता दिया कि ये प्रस्ताव भी बुद्धिमत्तापूर्ण थे। रियासतों में आजकल जो जागृति हो रही है, उसका बहुत-कुछ श्रेय इसी प्रस्ताव को है। मैसूर, त्रावणकोर, हैदराबाद, राजकोट, बड़ौदा, उदयपुर और जयपुर आदि में प्रजामण्डल संगठित होकर अपना काम कर रहे हैं। और अनेक रियासतों में आन्दोलन को सफलता भी मिली है। किसानों को उत्तेजना देनेवाले किसान-सभावादी काँग्रेसियों पर अनुशासन की कार्रवाई का भी उचित परिणाम हुआ।

संकट समाप्त

हरिपुरा-काँग्रेस के अवसर पर राष्ट्र ने एक बार फिर यह सिद्ध कर दिया कि वह आपस में कोई मतभेद रखते हुए भी विदेशी शक्ति से लड़ने के लिए सम्मिलित है और पद-ग्रहण करके सरकारी कुर्सियों की मौज लेने के बाद वह उसे ठुकराने में भी एक क्षण की देरी नहीं करता। इसी प्रश्न पर वाइसराय व गाँधीजी के वक्तव्य भी निकले। सरकार काँग्रेस की शक्ति को मान गई और ज्योंही बिहार व यू० पी० के प्रधानमंत्री हरिपुरा-काँग्रेस से अपने-अपने प्रान्तों में वापस गये, गवर्नरों ने उन्हें बुलाया। दोनों में चर्चा हुई। गवर्नरों ने मंत्रियों के साथ सहयोगपूर्वक काम करने का आश्वासन दिया और राजनैतिक क़ैदियों के मामले पर व्यक्तिगत विचार करके उन्हें रिहा करने का निश्चय प्रकट किया। फलतः मंत्रिमण्डलों ने इस्तीफ़े वापस ले लिये और फिर प्रान्तीय शासन की गाड़ी यथापूर्व चलने लगी। कुछ दिनों बाद उड़ीसा में भी एक वैधानिक संकट पैदा होते होते बचा। गवर्नर छुट्टी जानेवाले थे। उनकी जगह मंत्रिमण्डल के अधीन काम करनेवाले कर्मचारी को स्थानापन्न गवर्नर बनाना तय हुआ। गाँधीजी ने और काँग्रेस वर्किंग कमेटी ने इसका विरोध किया और ऐसी स्थिति उत्पन्न होने पर मंत्रिमण्डल को इस्तीफ़ा देने की सलाह दी। मंत्रियों ने भी इसमें अपना अपमान समझा। सरकार ठीक समय पर मान गई और गवर्नर ने प्रान्त के हित के ख़याल से छुट्टी मंसूख करा ली।

खरे-प्रकरण

अब वर्किंग कमेटी की बैठकों में जहाँ स्वराज्य-आन्दोलन को आगे बढ़ाने के उपायों पर विचार होता था, वहाँ भिन्न-भिन्न प्रान्तों की शासन-सम्बन्धी, आर्थिक और व्यावसायिक समस्याओं पर भी विचार होने लगा। कभी बिहार के बिहारी बनाम बंगाली झगड़े पर विचार हो रहा है, तो कभी बरार व मध्यप्रांत के आर्थिक प्रश्नों पर; कभी सीमाप्रान्त का सवाल है, तो कभी मद्रास, बिहार और युक्तप्रान्त

का। वर्किंग कमेटी द्वारा नियत पार्लमेण्टरी सब-कमेटी सभी प्रान्तों में एक-सी आर्थिक और शासन-सम्बन्धी नीति चलाने के लिए सब सरकारों से निकट-सम्पर्क में रहती हैं। किसानों, मजदूरों और व्यापार-व्यवसाय के विकास के सम्बन्ध में तरह-तरह के नियम तैयार किये जा रहे हैं और वर्किंग कमेटी सब प्रान्तों का सूत्र-संचालन कर रही है। सभी प्रान्तों की आन्तरिक समस्याओं पर उसे नियंत्रण रखना पड़ता है और इसमें सन्देह नहीं कि कुछ ही समय में उसने यह सिद्ध कर दिया है कि भारतवासी अपने शासन के पूर्ण योग्य हैं। इस बीच में एक दुःखद घटना भी हुई। मध्यप्रान्त के मंत्रिमण्डल में कुछ पारस्परिक मतभेद होगये। सरदार पटेल ने उन्हें सुलझाने का प्रयत्न किया। एक समझौता भी होगया, लेकिन कुछ दिनों बाद प्रधानमंत्री डा० खरे ने उसे तोड़ दिया। इससे स्थिति और भी पेचीदा होगई। डा० खरे ने दो मंत्रियों के साथ काँग्रेस पार्लमेण्टरी कमेटी से बिना पूछे ही गवर्नर के हाथों में इस्तीफ़ा दे दिया। गवर्नर ने उनका इस्तीफ़ा स्वीकार कर लिया और शेष तीन को बरखास्त कर नये सिरे से मंत्रिमण्डल बनाने के लिए डा० खरे को बुलाया। डाक्टर सा० ने महाकोशल के तीनों मंत्रियों की जगह और मंत्री रख लिये। इसपर वर्किंग कमेटी ने उनकी निन्दा की और उन्हें कांग्रेस-संस्थाओं में ज़िम्मेदारी के पद के अयोग्य क़रार दिया। गवर्नर की जल्दबाज़ी की भी निन्दा की गई। इसके बाद डा० खरे ने फिर इस्तीफ़ा दिया और मध्यप्रान्तीय असेम्बली की कांग्रेसपार्टी ने श्री रविशंकर शुक्ल को अपना नेता चुना और वही मध्यप्रान्त के प्रधानमंत्री हुए। डा० खरे जैसे प्रभावशाली व्यक्ति को इस तरह अनुशासन-दण्ड देना बड़े साहस का काम था। महात्मा गाँधी को भी डा० खरे से बहुत विचार-विनिमय करना पड़ा, लेकिन जब डा० खरे किसी तरह न माने, तब वर्किंग कमेटी को सारे देश में अनुशासन क़ायम रखने के लिए और आगे ऐसी कोई घटना न होने देने के लिए यह कठोर कार्रवाई करनी पड़ी। इसपर देश के कई क्षेत्रों में बड़ी आलोचना भी की गई, लेकिन सितम्बर १९३८ में दिल्ली में होनेवाली अ० भा० कांग्रेस कमेटी ने वर्किंग कमेटी के फ़ैसले पर मुहर लगाकर यह विवाद सदा के लिए बन्द कर दिया। इससे पहले मध्यप्रान्त के एक मुसलमान मंत्री श्री शरीफ़ को भी इस्तीफ़ा देना पड़ा, क्योंकि उन्होंने बलात्कार के एक क़ैदी को रिहा कर दिया था। इसके बाद मध्यप्रान्त के मंत्रिमण्डल में अबतक किसी मुसलमान की नियुक्ति नहीं की गई है।

नागरिक स्वाधीनता का दुरुपयोग

२४, २५, २६ सितम्बर को दिल्ली में होनेवाली अ० भा० कांग्रेस कमेटी में जहाँ खरे-प्रकरण बहुत महत्त्वपूर्ण विषय था, वहाँ दो-तीन प्रश्न और भी उपस्थित

थे। फेडरेशन के प्रश्न की चर्चा हम पहले कर चुके हैं। इसमें संघविधान-सम्बन्धी हरिपुरा-काँग्रेस के प्रस्ताव को दुहराते हुए अन्त में कहा गया था कि पिछले दिनों जो घटनायें हुई हैं, उनसे काँग्रेस के प्रस्ताव का औचित्य और भी सिद्ध होगया है और वह सरकार को चेतावनी देती है कि वह देश की इच्छा के विरुद्ध लादे गये संघ-विधान के कांग्रेस द्वारा स्वीकृत होने की आशा छोड़ दे। इसी प्रस्ताव में आगे यह घोषणा की गई थी कि "केन्द्र में वर्तमान अनुत्तरदायी सरकार भी असह्य होती जा रही है और इसे अधिक समय तक जारी रखने का अर्थ है क्रान्ति की संभावना।" अ० भा० काँग्रेस कमेटी के इस अधिवेशन से पहले श्री सत्यमूर्ति व राष्ट्रपति सुभाष में संघ-विधान पर एक विवाद-सा छिड़ गया था। श्री सत्यमूर्ति तो कुछ महत्त्व-पूर्ण संशोधन होजाने पर संघ-विधान को स्वीकृत करने की सलाह दे रहे थे, लेकिन राष्ट्रपति इसका तीव्र विरोध कर रहे थे। विवाद का आधार यह संदेह था कि श्री भूलाभाई देसाई ने इंग्लैण्ड के राजनीतिज्ञों को इस प्रकार का आश्वासन दिया था। श्री भूलाभाई द्वारा इस संदेह के प्रतिवाद के बाद यह विवाद भी समाप्त होगया।

अ० भा० काँग्रेस कमेटी में दूसरा महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव था रियासतों के बारे में। त्रावणकोर, हैदराबाद, ढेंकानल, तलचर और काश्मीर आदि रियासतों में होनेवाले प्रजा-आन्दोलनों के दमन की निन्दा की गई और प्रत्यक्ष हस्तक्षेप न करने की नीति को दुहराते हुए राजाओं से अनुरोध किया गया कि वे भी स्वेच्छा से अपने-अपने अधिकार प्रजा को सौंपकर ब्रिटिश भारत की प्रजा के सतह पर रियासती प्रजा को ले आवें और खुद केवल वैधानिक प्रमुख रहें।

बहुत-से सोशलिस्ट, मज़दूर व किसान नेता तथा कुछ भूतपूर्व क्रांतिकारी काँग्रेस की सत्य और अहिंसा की नीति के विरुद्ध प्रचार करने लगे थे। काँग्रेसी सरकारों ने नागरिक स्वाधीनता का सिद्धान्त अपना लिया था। पर इसका अर्थ उच्छृंखलता नहीं है, यह जहाँ काँग्रेसी सरकारें बार-बार दुहरा रही थी, वहाँ महात्मा गाँधी अपने लेखों में बार-बार इसपर ज़ोर दे रहे थे। कुछ स्थानों पर काँग्रेसी सरकारों ने लूट, मार-पीट, क़त्ल व श्रेणी-युद्ध के प्रचार के विरुद्ध कठोर कार्रवाइयाँ भी की थीं। काँग्रेस का वामपक्ष इन कार्रवाइयों का विरोध करने लगा था। इसलिए इस सम्बन्ध में अ० भा० काँग्रेस कमेटी से अपनी नीति का समर्थन प्राप्त कर लेना वर्किंग कमेटी के लिए आवश्यक होगया। फलतः इस आशय का प्रस्ताव पास किया गया—"कुछ लोग या जिनमें कुछ काँग्रेसी भी शामिल हैं, हिंसात्मक साधनों से श्रेणी-युद्ध और मारपीट, लूट व क़त्ल का प्रचार करते हुए पाये गये हैं। कुछ अख़बार भी अपने पाठकों में हिंसा का प्रचार करते हुए पाये गये हैं। काँग्रेस लोगों को चेतावनी देती है कि नागरिक स्वाधीनता में हिंसा के लिए उत्तेजन शामिल नहीं है। नागरिक स्वा-

धीनता के सम्बन्ध में काँग्रेस की नीति में कोई अन्तर न लाते हुए भी अ० भा० काँग्रेस कमेटी काँग्रेस-सरकारों की उन कार्रवाइयों का समर्थन करती है, जो जनता की जानमाल की रक्षा के लिए की गई हैं।" इस प्रस्ताव पर भी खूब बहस हुई। दो-एक वक्ताओं ने अहिंसा की नीति का खुल्लमखुल्ला विरोध भी किया। प्रस्ताव पर मत लेते समय सोशलिस्ट, किसान-सभावादी और श्री मानवेन्द्रनाथ राय की पार्टी के सदस्य उठकर चले गये। फिलस्तीन में ब्रिटिश सरकार की दमन-नीति की निन्दा, बरमा के उपद्रवों पर दुःख, कोई युद्ध छिड़ने पर काँग्रेसी नीति के सम्बन्ध में काँग्रेस वर्किंग कमेटी को अधिकार देने आदि के भी प्रस्ताव पास हुए।

वर्किंग कमेटी के महत्वपूर्ण निर्णय

काँग्रेस वर्किंग कमेटी ने डा० खरे को सफ़ाई देने के लिए बुलाया, पर उनके इन्कार कर देने पर कमेटी ने फैसला किया कि डा० खरे दो साल तक काँग्रेस के सदस्य नहीं बन सकते और उन्हें मध्यप्रान्तीय असेम्बली व अन्य काँग्रेसी संस्थाओं से इस्तीफ़ा दे देना चाहिए। चेकोस्लोवाकिया में जर्मनी के आकस्मिक आक्रमण की सम्भावना से विश्वव्यापी युद्ध की सम्भावना प्रतिदिन हो रही थी। यूरोप के सभी देशों की सरकारें अपनी सेनाओं को तैयार कर रही थीं। ब्रिटिश व भारत सरकार की सारी मशीनरी युद्ध की तैयारी में लगी हुई थी। न जाने किस क्षण लड़ाई छिड़ जाय, ऐसी परिस्थिति में काँग्रेस वर्किंग कमेटी के सदस्यों ने तबतक दिल्ली न छोड़ने का निश्चय किया, जबतक कि युद्ध-सम्बन्धी समस्या सुलझ न जाय। ब्रिटेन के प्रधान-मन्त्री मि०चैम्बरलेन ने चेकोस्लोवाकिया का अंगभंग मानकर जर्मनी को मुँहमाँगा दे दिया और युद्ध टल गया। वर्किंग कमेटी ने एक प्रस्ताव द्वारा चेकोस्लोवाकिया से सहानुभूति प्रकट की। एक और प्रस्ताव द्वारा वर्किंग कमेटी ने सभी काँग्रेसियों से एक साल तक हिन्दुस्तानी सीख लेने का अनुरोध किया, ताकि काँग्रेस कमेटियों या काँग्रेस दफ्तरों में अंग्रेज़ी के प्रयोग की ज़रूरत न रहे। यू० पी० असेम्बली में पेश किये जानेवाले काश्तकारों के बिल पर जमींदारों को आपत्ति थी। उनका डेपुटेशन सरदार पटेल आदि से इस सम्बन्ध में मिला। पार्लमेण्टरी सब-कमेटी ने इस शर्त पर मध्यस्थ होना स्वीकार किया कि उसका निर्णय उन्हें मान्य होगा। इसी प्रश्न पर यू० पी० काँग्रेस कमेटी की उपसमिति ने पार्लमेण्टरी कमेटी के अधिकारों की जो आलोचना की थी, उसे वर्किंग कमेटी ने भ्रान्त बताया। पर जमींदारों में पार्लमेण्टरी सब-कमेटी को मध्यस्थ मानने पर मतभेद होगया, इसलिए उसने बीच में पड़ने से इन्कार कर दिया।

काँग्रेस के विधान पर विचार करने के लिए हरिपुरा-काँग्रेस में जो कमेटी

नियत हुई थी, उसकी रिपोर्ट पर भी वर्किंग कमेटी ने दिल्ली की बैठक में विचार किया और उसे स्वीकृत किया। उसके अनुसार ज़िला कांग्रेस कमेटी का चुनाव तो प्रत्यक्ष चुनाव होगा और सभी कांग्रेसी सदस्य मत दे सकेंगे, लेकिन प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी का चुनाव सीधा साधारण सदस्यों द्वारा न होकर ज़िला कांग्रेस कमेटियों के सदस्य ही करेंगे। चुनाव की अव्यवस्था आदि रोकने के लिए भी कुछ सलाहें दी गईं।

१९३८ की केन्द्रीय असेम्बली

१९३८ में भी केन्द्रीय असेम्बली की काँग्रेस पार्टी का कार्य बहुत सन्तोषजनक रहा। असेम्बली के सदस्यों को संरक्षण और वैदेशिक विभाग की मदों के बारे में १९२४ से ही वोट द्वारा अपनी राय ज़ाहिर करने का अधिकार था। इस साल यह अधिकार छीन लिया गया। इसलिए काँग्रेस पार्टी ने अन्य अनेक पार्टियों के साथ मिलकर यह तय किया कि बजट में भाग ही न लिया जाय। फलतः १५ दिनों का काम डेढ़ दिन में ही समाप्त होगया। सरकार की मांगें गिर गईं। वाइसराय ने स्वीकृति देकर सिफारिश के साथ असेम्बली में फ़ाइनेन्स बिल को फिर भेजा, लेकिन असेम्बली ने उसे फिर नामंजूर कर दिया। कौंसिल ऑफ़ स्टेट में भी प्रगतिशील दल के सदस्य बजट की बहस के समय उठकर चले गये। शारदा-एक्ट में किये गये संशोधन का काँग्रेस-पार्टी ने पूरा समर्थन किया, जिसका उद्देश्य बाल-विवाह-निषेध क़ानून को और भी प्रभावशाली बनाना था। सरहदी सूबे में यूनिवर्सिटी क़ायम करने का प्रस्ताव पास हुआ। कई काम-रोको-प्रस्ताव वायसराय ने पेश ही नहीं होने दिये। १९३८ के शिमला-अधिवेशन और दिल्ली के विशेषाधिवेशन में इन्कमटैक्स संशोधन बिल के अन्तिम रूप के निर्धारण में काँग्रेस पार्टी का एक विशेष भाग है।

रियासतों की अपूर्व जागृति

हरिपुरा-काँग्रेस का रियासतों सम्बन्धी प्रस्ताव कितना उपयोगी सिद्ध हुआ, इसका निर्देश हम ऊपर कर चुके हैं, लेकिन इसपर कुछ अधिक विस्तार से लिखने की ज़रूरत है। दरअसल इस साल की सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण घटना रियासतों में होनेवाली अपूर्व जागृति है। यद्यपि यह प्रस्ताव प्रत्यक्ष तौर पर रियासती जनता का विरोधी समझा गया था, लेकिन इसका परिणाम दूसरा ही हुआ। इससे रियासती जनता ने स्वाभिमान और आत्मनिर्भरता सीखी। आज इसका परिणाम हमारी आँखों के सामने है। काश्मीर, मैसूर, त्रावणकोर, हैदराबाद, बड़ौदा, तलचर, ढेंकानल, राजकोट, उदयपुर, आदि अनेक रियासतों में स्टेट काँग्रेस या प्रजामण्डल की ओर से जागृति और जन-आन्दोलन का श्रीगणेश हुआ। रियासतों के अधिकारियों ने दमन भी खूब किया। किसी-किसी रियासत में तो दमन में ब्रिटिश भारत को भी मात कर गया।

गिरफ्तारियाँ, मारपीट, लूट, लाठी-प्रहार, फ़सलों का जलाया जाना, जनता को हाथियों से रोंदा जाना आदि दर्दनाक समाचारों से अखबारों के कालम भरे जाने लगे। लेकिन कहीं दमन से प्रजा की जागृति नष्ट हुई है ? इस दमन से यह आन्दोलन और भी बढ़ा। यों कांग्रेस कमेटियों का इस आन्दोलन से प्रत्यक्ष सम्बन्ध न था, लेकिन अनेक रियासतों में प्रमुख काँग्रेसी कार्यकर्ताओं ने व्यक्तिगत रूप से काफ़ी भाग लिया। इनमें सरदार पटेल का स्थान सबसे ऊँचा है। राजकोट का आन्दोलन तो उन्हींका चलाया हुआ है। इसमें सिर्फ़ राजकोट के ही नहीं, ब्रिटिश भारत के भी बहुत से काँग्रेसी कार्यकर्ता गिरफ्तार हुए। अखिल-भारतीय देशी राज्य लोक परिषद् के प्रधानमंत्री श्री बलवंतराय मेहता, कुमारी मणिबेन पटेल, कुमारी मृदुला साराभाई आदि विशिष्ट व्यक्ति गिरफ्तार हुए। लेकिन कुछ समय बाद राजकोट के ठाकुर ने सरदार पटेल को निमंत्रण देकर समझौता कर लिया। राजकोट के ठाकुर ने एक उपसमिति द्वारा सिफ़ारिश की गई शासन-सुधार-सम्बन्धी योजना को स्वीकार करने का निश्चय किया। इस आन्दोलन में बदनाम और आन्दोलन को कुचलनेवाले अंग्रेज़ दीवान सर पैट्रिक कैडल बरखास्त कर दिये गये। यह रियासती जनता की बड़ी भारी विजय थी।

राजकोट के इस आन्दोलन में काँग्रेस भी अप्रत्यक्ष तौर पर काफी दिलचस्पी ले रही थी। इसका एक खास कारण यह था कि अंग्रेज़ दीवान रियासतों में भी ब्रिटिश हुकूमत चला रहे थे और राजा व प्रजा में सीधा सम्बन्ध स्थापित होने में बाधक बन रहे थे। ब्रिटिश सरकार की फौज व पुलिस की सहायता भी दमन में ली जाने लगी थी। काँग्रेस तो ब्रिटिश सरकार से भारत की सभी श्रेणियों को मुक्ति दिलाने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध है। म० गाँधी ने राउण्ड टेबल कांफ्रेंस में काँग्रेस को 'राजाओं की प्रतिनिधि' भी कहा था। महात्मा गाँधी ने रियासतों में ब्रिटिश सरकार के अंग्रेज़ अधिकारियों की प्रमुखता और उनके अनुचित प्रभाव की कठोर शब्दों में निन्दा की। काँग्रेस वर्किंग कमेटी ने वर्धा की दिसम्बर की बैठक में रियासतों के सम्बन्ध में जो महत्त्वपूर्ण घोषणा की थी, उसका एक खास अंश यह है—"कमेटी उन शासकों की कार्रवाईयों की ख़ास तौर पर निन्दा करती है, जिन्होंने ब्रिटिश सरकार की सहायता से अपनी प्रजा को दबाने की कोशिश की है और इस बात का ऐलान करती है कि अगर उत्तरदायी शासन की माँग के लिए चलाये गये रियासती जनता के आन्दोलनों को ब्रिटिश सरकार की पुलिस या फ़ौज की सहायता से दबाने का यत्न किया जायगा तो उस हालत में काँग्रेस को पूरा अधिकार होगा कि वह पुलिस और फ़ौज द्वारा किये जानेवाले अनियंत्रित दमन से जनता की रक्षा करे।" इस प्रस्ताव के प्रारम्भ में रियासतों की जागृति का स्वागत करते हुए शासकों की छत्रच्छाया में ज़िम्मेदार सरकार की स्थापना के आन्दोलन से सहानुभूति प्रकट करके रियासती शासकों की दमननीति

की निन्दा की गई थी। प्रस्ताव के उत्तरार्द्ध में कहा गया था कि "कमेटी हरिपुरा-काँग्रेस के उस प्रस्ताव की ओर फिर ध्यान दिलाना चाहती है, जिसमें काँग्रेस ने रियासतों के सम्बन्ध में अपनी नीति निर्धारित की है। यद्यपि काँग्रेस को इस बात का पूरा अधिकार है कि वह रियासतों में नागरिक स्वतन्त्रता और ज़िम्मेदार सरकार की स्थापना के लिए पूरा काम करे, लेकिन मौजूदा परिस्थिति में काँग्रेस को अपना कार्य-क्षेत्र सीमित रखना पड़ा है और नीति की दृष्टि से काँग्रेस रियासतों के भीतरी झगड़ों में एक संस्था की हैसियत से नहीं पड़ना चाहती। यह नीति जनता की भलाई के लिए बनाई गई थी, ताकि उसमें आत्म-निर्भरता और शक्ति आवे। उस नीति का आशय रियासतों के प्रति काँग्रेस की सद्भावना प्रकट करना भी था और उससे काँग्रेस ने यह भी आशा की कि रियासती शासक खुदबखुद समय को पहचान कर जनता की न्याय-युक्त माँगों को पूरा कर देंगे।······लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि कांग्रेस उससे हमेशा बाध्य रहेगी। काँग्रेस ने हमेशा यह अपना अधिकार समझा है कि वह जैसा कि उसका कर्तव्य भी है, रियासती जनता को रास्ता बतलावे और अपने प्रभाव से उसके पक्ष का समर्थन करे। रियासतों में जो अब यह जागृति हो रही है, उसके परिणाम-स्वरूप तो कांग्रेस रियासती जनता के और भी निकट आती जायगी।" इस लम्बे प्रस्ताव में आगे ब्रिटिश भारत की प्रजा को रियासतों के सविनय आज्ञाभंग आन्दोलन में भाग न लेने और रियासती आन्दोलनों को अहिंसात्मक रखने की अपील की गई थी।

उड़ीसा की दुर्घटना

रियासतों में उत्तरदायी शासन की माँग का जो आन्दोलन चल रहा है, वह अभी समाप्त नहीं हुआ। निज़ाम हैदराबाद में स्टेट कांग्रेस ने अपना सत्याग्रह किन्हीं कारणों से स्थगित कर दिया, लेकिन यह स्पष्ट कर दिया कि वह निजाम-सरकार को समय दे रही है, ताकि वह स्वयं इस प्रश्न पर गंभीरता से विचार कर सके। त्रावणकोर में भी सत्याग्रह स्थगित है और गाँधीजी की सलाह के अनुसार स्टेट-कांग्रेस ने दीवान पर से अपने अभियोग वापस ले लिये हैं। उदयपुर में प्रजा-मण्डल का सत्याग्रह जारी है। बहुत-सी गिरफ्तारियाँ हो चुकी हैं। उड़ीसा की रियासतों में भी आन्दोलन जारी है। रणपुर रियासत में एक भीषण दुर्घटना होगई। अंग्रेज पोलिटिकल एजण्ट श्री बजलगेटी ने जनता के एक जलूस को राजा के महल की ओर आने से रोका। वह जलूस राजा के आगे अपनी माँगों और तक-लीफ़ों का प्रदर्शन करने जा रहा था। भीड़ ने पोलिटिकल एजण्ट की बात नहीं मानी और आगे बढ़ती गई। इसपर उन्होंने अपनी आत्मरक्षा के ख़याल से या भीड़

को तितर-बितर करने के ख़याल से गोली चला दी। दो आदमी मर गये। भीड़ भी उत्तेजित हो उठी और उसने पोलिटिकल एजण्ट को मार डाला। काँग्रेस वर्किंग कमेटी ने बारडोली में जनवरी की बैठक में इस हत्या की निन्दा की। लेकिन ब्रिटिश सरकार इससे शान्त नहीं हुई। उड़ीसा के गवर्नर ने कलकत्ता से फ़ौज बुला ली। वे उड़ीसा में नरेन्द्र रक्षा-विधान भी लागू करना चाहते हैं, लेकिन मालूम हुआ है कि उड़ीसा की काँग्रेसी सरकार इसके विरुद्ध है। संभव है कि इसी प्रश्न पर वैधानिक संकट पैदा होजाय और काँग्रेसी सरकार इस्तीफ़ा दे दे।

सेठ जमनालाल बजाज पर पाबन्दी

जिन रियासतों में आन्दोलन चल रहा है, वह अभी ख़त्म नहीं हुआ कि जयपुर राज्य ने सेठ जमनालाल बजाज के जयपुर-प्रवेश पर पाबन्दी और प्रजामंडल को, जिसके वे सभापति थे, ग़ैरक़ानूनी करार देने की आज्ञा जारी करके जयपुर में भी सत्याग्रह-आन्दोलन को निमंत्रण दे दिया है। श्री जमनालाल बजाज जयपुर प्रजामण्डल के अकाल-निवारण के काम को देखने व सीकर-आन्दोलन के बन्दियों की रिहाई के बारे में बातचीत करने जा रहे थे। सेठजी ने एक मास का समय जयपुर सरकार को अपनी आज्ञा पर पुनर्विचार के लिए दिया। वर्किंग कमेटी ने बारडोली की बैठक में जयपुरी नीति की तीव्र निन्दा की। गाँधीजी ने दो लेखों में जयपुर नरेश को अंग्रेज़ मिनिस्टरों के हाथ का खिलौना बताते हुए अंग्रेज़ दीवान के प्रभुत्त्व और नीति की फिर तीव्र निन्दा की और रियासती जनता को आत्म-सम्मान के लिए सत्याग्रह की सलाह दी। श्री जमनालाल बजाज ने दी हुई मियाद गुज़र जाने के बाद १ फ़रवरी को जयपुर कूच कर दिया। बी. बी. एण्ड. सी. आई. रेलवे की सीमा में जयपुर स्टेशन पर ही पुलिस अधिकारियों ने उन्हें गिरफ्तार कर लिया। लेकिन दूसरे दिन मथुरा ले जाकर छोड़ दिया। सेठजी ५ फ़रवरी को फिर जयपुर रवाना हुए और वहाँ गिरफ्तार होगये लेकिन फिर रिहा कर दिये गये। १२ फ़रवरी को वे फिर जयपुर की ओर गये और गिरफ्तार कर लिये गये। प्रजामण्डल की ओर से सत्याग्रह शुरू होगया है। कई जत्थे गिरफ्तार हो चुके हैं। अब गांधीजी की गंभीर और अर्थपूर्ण लेखनी रियासतों में सर्वोन्चि सत्ता के प्रतिनिधि अंग्रेज़ अधिकारियों की दमननीति और हस्तक्षेप के विरुद्ध आग उगलने लगी है। गाँधीजी ने जयपुर के प्रश्न को अखिल-भारतीय रूप देने और काँग्रेस के स्वयं इस प्रश्न को हाथ में लेने की संभावना प्रकट की। इन्हीं दिनों राजकोट के ठाकुर और सरदार पटेल के जिस समझौते का हम ज़िक्र कर चुके हैं, वह टूट चुका था। राजकोट के ठाकुर ने सरदार पटेल द्वारा नियुक्त सदस्यों को रखने से इन्कार कर दिया। इसमें पश्चिमी रिया-

सतों के रेजिडेण्ट मि० गिबसन का पूरा हाथ था, जैसा कि बाद में प्रजामण्डल द्वारा प्रकाशित ठाकुर, अंग्रेज़ दीवान सर पैट्रिक कैडल, और रेजिडेण्ट मि० गिबसन के पत्र-व्यवहार से भी प्रकट होगया।

सत्य के पुजारी महात्मा गांधी के लिए वचन भंग जैसा कोई बड़ा पाप नहीं। उन्होंने एक के बाद एक निकलने वाले लेखों में ब्रिटिश सरकार की सर्वोच्च सत्ता को खूब आड़े हाथों लिया। लोग आश्चर्य करने लगे कि रियासतों में हस्तक्षेप न करने की नीति के प्रमुख समर्थक गाँधीजी अब उग्रतम रुद्र रूप दिखा रहे हैं। सरदार पटेल ने तो खुल्लमखुल्ला कहा कि हमारी लड़ाई राजकोट के ठाकुर से नहीं, राजकोट के रणक्षेत्र में ब्रिटिश सरकार से है। इधर सदा शान्त रहनेवाले सेठजी भी खूब गरम होरहे थे। जयपुर-सत्याग्रह प्रारम्भ करने से पहले उन्होंने जो भाषण दिये, वे वीर योद्धा सेनापति को ही शोभा देते थे। उन्होंने एक भाषण में कहा कि "आज सात समुद्र पार से आनेवाला अंग्रेज़ दीवान सर बीचम मुझे, जिसकी जन्मभूमि जयपुर है, किस हैसियत से बाहरी आदमी कह सकता है ?"

राजकोट में फिर रणभेरी बज उठी। अबके रेजिडेण्ट ने दमन में खूब सहायता दी। उसीके इशारे पर तो यह लड़ाई शुरू की गई थी। पूज्य माता कस्तूरबा गांधी भी सत्याग्रह में पहुँचीं और गिरफ्तार हो गईं। कुमारी मणिबेन पटेल (सरदार पटेल की पुत्री) भी उनके साथ गिरफ्तार हो गईं। गिरफ्तारी, तलाशी, मारपीट, जुरमाना, १४४ धारा तथा दूसरे आर्डिनेंसों का दौरदौरा चल रहा है। गाँधीजी यद्यपि आन्दोलन-क्षेत्र में मौजूद नहीं हैं, लेकिन वस्तुतः सूत्र-संचालन वही कर रहे हैं। ऐसा मालूम होता है कि यह महान् सेनापति फिर रणक्षेत्र में कूद पड़ा है और किसी महान् समर का सूत्रपात करनेवाला है। जब ब्रिटिश सरकार की सर्वोच्च सत्ता ने रियासतों के मैदान पर काँग्रेस से लड़ाई प्रारम्भ कर दी,तो गाँधीजी, ब्रिटिश भारत और काँग्रेस पीछे कैसे रह सकते थे, गांधीजी ने एक महान् वैधानिक संकट पैदा करने की संभावना बताते हुए ब्रिटिश सरकार को धमकी दी कि आज काँग्रेस और ब्रिटिश सरकार एक-दूसरे के मित्र हैं और रियासतें ब्रिटिश सरकार की आसामी। ऐसी स्थिति में यह असह्य है कि काँग्रेस से इन्हीं रियासतों में शत्रु और बेगाने आदमी की भाँति बर्ताव किया जाय। यद्यपि गवर्मेण्ट आफ़ इण्डिया एक्ट द्वारा काँग्रेसी मंत्रियों को रियासतों पर कुछ भी अधिकार प्राप्त नहीं हैं, तथापि मंत्रियों के कुछ ऐसे अधिकार तथा कर्तव्य उक्त एक्ट से बाहर भी हैं। "अगर यह कल्पना कर ली जाय कि राजकोट में देश के तमाम बड़े-बड़े गुण्डे जमा होजायँ, तो बम्बई के मंत्रि-मण्डल को ब्रिटिश सरकार से इसके विरुद्ध शिकायत करने का पूरा हक़ है। यदि

उसकी बात न सुनी जाय, तो उसे इस्तीफ़ा दे देना चाहिए। जिस प्रकार महामारी के फैलने के समय काँग्रेसी सरकारें अपनी भौगोलिक सीमा में स्थित रियासतों को सहायता दिये बिना नहीं रह सकतीं, उसी तरह इस मुसीबत के समय भी वे चुप नहीं रह सकतीं। इसलिए अगर उड़ीसा के मंत्री २६ हज़ार निराश्रितों को फिर तेलचर नहीं भिजवा देते, तो वे आराम से अपनी कुर्सियों पर नहीं बैठ सकते। सर्वोच्च सत्ता या तो काँग्रेसी मंत्रिमण्डलों की माँग को माने या अपने मंत्रियों को खो दे।" पदग्रहण के बाद से कांग्रेस ने जो शक्ति तथा अधिकार प्राप्त कर लिया था, उसके साथ त्यागपत्र देकर ब्रिटिश भारत में महान् वैधानिक संकट पैदा करने की गंभीर अर्थपूर्ण धमकी भारत-सरकार पर क्या प्रभाव डालेगी, यह शायद दो एक महीनों तक पाठकों को प्रकट हो जायगा। गाँधीजी ने इसी लेख में रियासती जनता से अहिंसात्मक रहने की अपील करते हुए लिखा था कि "उसकी विजय अवश्यम्भावी है, यहाँतक कि ठाकुर साहब को भी वह रेजिडेण्ट के पंजे से स्वतंत्र कर सकेगी। वह इस विजय से साबित कर दिखायेगी कि वह कांग्रेस की सर्वोच्च सत्ता के मातहत राजकोट की सच्ची शासक है।" रियासतों के मामले में काँग्रेस के लिए "सर्वोच्च सत्ता" का शायद यह पहली बार प्रयोग किया गया था। कुछ साल पहले ब्रिटिश भारत जिस आन्दोलन का क्षेत्र बना हुआ था, उस युद्ध का क्षेत्र अब भारतीय भारत हो गया है। लड़नेवाले वही दोनों हैं——काँग्रेसी और अंग्रेज़ सरकार।

ज्यों-ज्यों रियासती आन्दोलन तीव्र होता गया, रियासतों का दमन भी बर्बरता की सीमा तक पहुँचने लगा। गाँधीजी ने राजकोट की घटनाओं के लिए रैज़िडेण्ट पर 'सुसंगठित गुण्डेपन' का आरोप लगाया। सत्याग्रहियों को दूर-दूर लेजाकर नंगा करके पीटने और बिना सहारे छोड़ने की आम ख़बरें आने लगीं। लीम्बड़ी से बड़े रोमांचकारी समाचार आये। प्रजापरिषद् के अधिवेशन पर गुण्डों ने चाकुओं, तलवारों और लाठियों से भयंकर हमला कर सैकड़ों आदमियों को घायल कर दिया। सभापति दरबार गोपालदास को स्टेशन पर सैकड़ों गुण्डों ने घेर लिया। प्रजा-परिषद् के आदमी ढूँढ-ढूँढ कर मारे व पीटे जाने लगे। एक गाँव के चारों ओर सशस्त्र गुण्डों का पहरा और फिर गांव की लूट-मार और चोरी की ख़बरें भी मिलीं। इधर श्री चूडगर ने एक पत्र के द्वारा गाँधीजी को बताया कि जयपुर के प्रधान मन्त्री सर बीचम ने उन्हें बातचीत में कहा था कि अहिंसात्मक युद्ध भी तो एक प्रकार का बलप्रयोग है, उसका मुक़ाबला मैं दूसरे बल——मशीनगन से करूँगा। गाँधीजी ने इस पर लिखा कि "काँग्रेस में ताक़त होते हुए वह इन्तज़ार करती रहे, चुपचाप देखती रहे और जयपुर की प्रजा को मानसिक तथा नैतिक भूख से मरने दे——ख़ासकर जब कि एक प्राकृतिक अधिकार पर लगाई गई ऐसी पाबन्दी के पीछे ब्रिटिश-साम्राज्य

का पंजा हो--काँग्रेस के लिए यह सम्भव नहीं। जयपुर का प्रधानमन्त्री अगर बग़ैर सत्ता के यह सब कर रहा हो तो कम-से-कम पद पर से तो उसे हटा ही देना चाहिए।"

दरअसल काँग्रेस और देशी राज्यों की प्रजा का आन्दोलन एक दूसरे के बहुत निकट आ रहा था। देशी राज्य प्रजापरिषद् के सभापति दो सालों से डा० पट्टाभि सीतारामैया थे। वे रियासतों के मामले में बहुत दिलचस्पी ले रहे थे। परिषद् के लुधियाना-अधिवेशन में पं० जवाहरलाल नेहरू सभापति चुने गये। परिषद् का यों काँग्रेस से कोई सम्बन्ध नहीं था, लेकिन गाँधीजी और सरदार पटेल के आन्दोलन के नेतृत्व, बदले हुए समय और श्री जवाहरलाल नेहरू के सभापतित्व के कारण यह काँग्रेस के बहुत निकट आगई और लुधियाना-अधिवेशन में तो इसने काँग्रेस के सहयोग और नेतृत्व में काम करने का निश्चय कर लिया। पं० जवाहरलाल नेहरू यों ही रियासतों के मामले में बहुत उग्र थे और अब तो गाँधीजी की उग्रता ने उन्हें अपने विचार और भी स्पष्ट रूप से कहने का मौक़ा दे दिया।

इस कान्फ़्रेंस के एक प्रस्ताव में कहा गया था कि रियासती प्रजा के अधिकार-प्राप्ति संग्राम और उसके प्रति काँग्रेसी-नीति देखते हुए अब समय आगया है, जबकि इस आन्दोलन का भारतीय स्वतन्त्रता के व्यापक आन्दोलन से, जिसका यह भी एक अंग है, समन्वय कर दिया जाय। इस तरह से सम्मिलित एक भारतीय आन्दोलन स्वाभाविक तौर पर काँग्रेस के परामर्श से ही सम्भव है। यह कान्फ्रेंस इस सहयोग को ख़ुशी से स्वीकार करती है। इसलिए यह कान्फ़्रेंस वर्किंग कमेटी को आदेश और अधिकार देती है कि राष्ट्रीय काँग्रेस या उसके द्वारा नियत उपसमिति के सहयोग व नेतृत्व से आन्दोलन चलावे। अमल में आने पर यह प्रस्ताव श्री पट्टाभि सीतारामैया के शब्दों में "काँग्रेस को वस्तुतः **अखिल-भारतीय-राष्ट्रीय** रूप दे देगा"। एक दूसरे प्रस्ताव में रियासती शासन-पद्धति को बिलकुल असामयिक, सामन्तशाही-सी तथा उन्नति के लिए बाधक बताते हुए जल्दी-से-जल्दी उत्तरदायी शासन की माँग की गई थी। एक प्रस्ताव में २० लाख से कम आबादी और ५० लाख रु०से कम आमदनीवाली रियासतों को शासन-प्रबन्ध तथा फ़ैडरेशन में एक स्वतंत्र अंग की भांति सम्मिलित होने के लिए असमर्थ बताते हुए यह माँग पेश की गई थी कि उन्हें पड़ोसी प्रान्त के साथ या आपस में मिला देना चाहिए। काँग्रेस से भी इस सम्बन्ध में जाँच-कमेटी बिठाने की प्रार्थना की गई थी। भिन्न-भिन्न रियासतों में होनेवाले दमन या नागरिक स्वाधीनता-अपहरण की निन्दा की गई। एक महत्वपूर्ण प्रस्ताव में आज से १००-१५० साल पहले राजाओं के साथ की गई संधियों के सम्बन्ध में कहा गया कि वे संधियाँ करनेवाले देशी राजा वस्तुतः अधिकारी न थे, वे तो केन्द्रीय मुग़ल सरकार के कमज़ोर होने पर ख़ुदमुख़्तार बन बैठे थे। इन संधियों को सरकार स्वयं समय-समय

पर तोड़ती रही है। आज की बदली हुई स्थिति में रियासती जनता पर १०० साल पहले की गई संधियों को, जिनमें उनकी कोई चिन्ता नहीं की गई, मानने के लिए ज़ोर नहीं दिया जा सकता। इन संधियों का उपयोग अब ब्रिटिश-सरकार रियासती जागृति के दमन के लिए ही करती है। ये अब वर्तमान समय के बिलकुल प्रतिकूल और अक्रियात्मक होगई हैं। इन्हें अब समाप्त कर देना चाहिए। इन प्रस्तावों के यहाँ देने का आशय यह है कि इससे काँग्रेसी नेताओं की भविष्य के सम्बन्ध में विचार-दिशा का स्पष्ट ज्ञान हो जायगा।

रियासतों में शासनसुधार

काँग्रेस की रियासती नीति का एक विशेष परिणाम यह हुआ है कि कुछ राजा समय की गति को पहचानने लगे हैं और यह देखने लगे हैं कि भारत का भविष्य काँग्रेस के हाथ में है। वे अब पोलिटिकल डिपार्टमेण्ट से सलाह न लेकर काँग्रेसी नेताओं से परामर्श करने लगे हैं। औंध नरेश ने बम्बई के प्रधानमंत्री श्री खेर से उत्तरदायी शासन का उद्घाटन भी करा दिया है। इस विधान की रूपरेखा गाँधीजी की सलाह से बनाई गई थी। सांगली आदि और भी कुछ रियासतों ने देखा-देखी इस दिशा में कदम उठाने का निश्चय किया है। ऐसा मालूम होता है कि फ़ेडरेशन की समस्या पर कोई गंभीर निश्चय करने से पहले काँग्रेस रियासतों को उत्तरदायी शासन की दिशा में ब्रिटिश भारत के प्रान्तों की सतह पर ले आना चाहती है।

वर्धा की दिसम्बर की वर्किंग कमेटी की बैठक में, जिसका ऊपर ज़िक्र हो चुका है, और भी कुछ निश्चय किये गये थे। एक प्रस्ताव द्वारा वाइसराय से अनुरोध किया गया कि रुपये की १ शि० ६ पेंस विनिमय-दर को बदल कर रुपये की क़ीमत कम कर दी जाय। सब काँग्रेसी प्रान्तीय सरकारों ने भी इसी आशय का अनुरोध सरकार से किया। एक प्रस्ताव द्वारा काँग्रेस के बनावटी सदस्य बनानेवालों की निन्दा करते हुए कहा गया कि "काँग्रेस सिर्फ़ इसी बात पर गर्व नहीं करती कि उसका ध्येय हिन्दुस्तान की जनता को आज़ाद करना है, बल्कि उसे अपने सच्चे और शुद्ध तरीक़ों पर भी गर्व है।······एक सैनिक संगठन की हैसियत से काँग्रेस की वास्तविक शक्ति अनुशासन और संयम से काम करनेवाले कार्यकर्ताओं से है, न कि एक विशाल और बेकार सदस्य-संख्या से।" बनावटी या बेज़ाब्ता बने हुए सदस्यों के नाम काटने की आज्ञा देते हुए वर्किंग कमेटी ने विधान में भी कुछ परिवर्तन की सलाह दी, जिससे चुनाव की गन्दगी और अन्दरूनी कमज़ोरी से काँग्रेस का बचाव हो सके। एक प्रस्ताव द्वारा फिलस्तीन में अंग्रेज सरकार के दमन की निन्दा की गई और दूसरे प्रस्ताव द्वारा देश-भर से २६ जनवरी को स्वतन्त्रता-दिवस मनाने की अपील।

मुस्लिम लीग से चर्चा भंग

मुस्लिम लीग से समझौते की जो चर्चा चल रही थी, उसपर यह प्रस्ताव पास किया गया—"वर्किंग कमेटी ने मुस्लिम लीग की कराची की बैठक में पास हुए प्रस्ताव पर ग़ौर किया। वर्किंग कमेटी की राय है कि मुस्लिम लीग की कौंसिल ने अपनी जो स्थिति बना ली है, उसे ध्यान में रखते हुए लीग के साथ पत्र-व्यवहार जारी रखने से कोई लाभ न होगा। राष्ट्रपति को इस बात का अधिकार दिया गया कि वे श्री जिन्ना को पत्र-व्यवहार बन्द कर देने के लिए लिख दें।" राष्ट्रपति सुभाषचन्द्र बोस ने १६ दिसम्बर १९३८ को श्री जिन्ना को नीचे लिखा पत्र भेजा:—

"वर्किंग कमेटी ने आपके १८ अक्तूबर १९३८ के पत्र पर विचार किया और उसके द्वारा आपने अपना जो निश्चय ज़ाहिर किया, उसपर खेद प्रकट किया। चूँकि वर्किंग कमेटी का मुस्लिम लीग की कौंसिल से इस बात पर इत्तफ़ाक़ होना संभव नहीं हो रहा है कि समझौते की बातचीत की शर्तें क्या हों और चूँकि कौंसिल का आग्रह है कि समझौते की बातचीत शुरू करने से पहले उन शर्तों का तय हो जाना ज़रूरी है, इसलिए वर्किंग कमेटी हिन्दू-मुस्लिम समस्या को हल करने के लिए समझौते की बातचीत शुरू करने की दिशा में अब कुछ भी करने में असमर्थ है।..."

यद्यपि मुस्लिम लीग से चर्चा बन्द होगई, लेकिन वर्किंग कमेटी हिन्दू-मुस्लिम समस्या से उदासीन नहीं होगई। कमेटी ने बारडोली की बैठक में गंभीरता से एक योजना पर विचार किया। लेकिन, काँग्रेस के प्रधान मंत्री आचार्य कृपलानी के शब्दों में, "कार्यसमिति इस नतीजे पर पहुँची कि इस सम्बन्ध में फिलहाल कोई वक्तव्य प्रकाशित न किया जाय, क्योंकि इससे कोई खास फायदा न होगा और कोई सर्वसम्मत समझौता होने में देर हो जायगी। इसलिए वक्तव्य प्रकाशित न करते हुए भी वह यह फिर स्पष्ट कर देना चाहती है कि वह तमाम जातियों के साथ न्याय करने की व समय-समय पर उठनेवाली आशंकाओं को दूर करने के लिए दिये गये आश्वासनों के अनुसार अपनी कोशिशें जारी रक्खेगी।" इसी अरसे में पं० जवाहरलाल नेहरू ने श्री जिन्ना को यह सम्मति दी कि काँग्रेसी सरकारों पर मुस्लिम-लीग जो अभियोग लगा रही है, उन्हें एक निष्पक्ष पंचायत के सामने जाँच के लिए रक्खा जाय; लेकिन श्री जिन्ना ने इसका कोई सन्तोषजनक उत्तर न दिया।

राष्ट्र का पुनर्निर्माण

श्री सुभाष के राष्ट्रपति-काल की एक और महत्त्वपूर्ण घटना की ओर निर्देश करना भी आवश्यक दीखता है। हम पहले कह चुके हैं कि काँग्रेस वर्किंग कमेटी अब सिर्फ़ आन्दोलनकर्त्री सभा न रही थी। उसके हाथ में ब्रिटिश भारत के ११ में से

८ प्रान्तों का शासन-सूत्र भी था, इसलिए उसे देश के सामने आनेवाली सभी समस्याओं का भी हल करना था। भारत-सरकार की व्यावसायिक नीति से भारत अभी तक उद्योग-धन्धों में तरक्की न कर सका था। प्रान्तीय काँग्रेसी सरकारों ने इधर बहुत गंभीरता से ध्यान दिया। काँग्रेस वर्किंग कमेटी भी इस प्रश्न को उपेक्षा की दृष्टि से नहीं देख सकती थी। पं० जवाहरलाल नेहरू की अध्यक्षता में एक कमेटी बनाई गई, जिसका काम औद्योगिक योजनाओं को तैयार करना था। इसने सर एम० विश्वेश्वरय्या, प्रो० मेघनाद साहा, सर पुरुषोत्तमदास ठाकुरदास, डा० वी० एस० दुबे, श्री अम्बालाल साराभाई, प्रो० के० टी० शाह, श्री कुमारप्पा आदि व्यवसायियों, अर्थशास्त्रियों और वैज्ञानिकों का सहयोग भी प्राप्त कर लिया। छोटे और बड़े धन्धे, खेती, पानी से बिजली बनाने के साधन, कम खर्च पर आमदरफ्त का इन्तज़ाम, नदियों के मार्ग बदल कर बाढ़ों की रोक और सार्वजनिक स्वास्थ्य-रक्षा आदि सब इसका अधिकार-क्षेत्र है। यह आशा की जाती है कि प्रान्तीय सरकारों के सहयोग से निकट-भविष्य में यह काम सफल होगा। इसने एक प्रश्नावली बनाकर देश के अर्थशास्त्रियों, वैज्ञानिकों, व्यवसायियों, व्यापारियों, राजनीतिज्ञों आदि के पास भेज दी है।

अन्य प्रगतियाँ

कांग्रेस की प्रगति का इतिहास पढ़ते समय हमें कांग्रेस द्वारा स्थापित संस्थाओं की प्रगति को न भूल जाना चाहिए, जो अपने-अपने क्षेत्र मे बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही हैं। चरखा-संघ १,७७,४९६ कत्तिनों और १३,५९८ बुनकरों के अलावा हजारों ओटनेवाले, धुननेवाले, रंगने और धोनेवालों को रोज़ी दे रहा है। चरखा-संघ इस वर्ष कत्तिनों की मजूरी बढ़ाने पर विशेष ध्यान दे रहा है। ग्रामोद्योग-संघ भी किसानों तथा ग्रामीणों के लिए नित नये प्रयोग कर एक नया अर्थशास्त्र और नया विज्ञान तैयार कर रहा है, जिसका आधार पूँजीवाद न होकर ग्रामीण किसान का हित है। शिक्षाबोर्ड शिक्षा के क्षेत्र में प्रगति कर रहा है। कांग्रेस-द्वारा नियत मजूर समिति भी काम कर रही है। गांधीसेवा-संघ की सेवायें तो राष्ट्र की प्रगति के इतिहास में अद्भुत स्थान रखती हैं। पं० जवाहरलाल द्वारा स्थापित सिविल लिबर्टी यूनियन का काम भी उसी उत्साह से जारी है। हरिजन सेवक संघ सामाजिक उन्नति की ओर—राष्ट्र के एक बड़े भारी अंग के विकास की ओर प्रगतिशील है। आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के वैदेशिक और आर्थिक विभागों का कार्य भी ठीक चल रहा है। वैदेशिक विभाग ने चीन-जापान युद्ध के सम्बन्ध में बहुत दिलचस्पी ली। भारत में १२ जून को चीन-दिवस मनाया गया। डाक्टरों का एक मिशन भी चीनियों की सेवा के लिए कांग्रेस ने भेजकर अपनी ओर से अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध स्थापित करने का प्रयत्न किया।

: ४ :

गांधीजी का अनशन व त्रिपुरी कांग्रेस

राष्ट्रपति चुनाव का संकट

कांग्रेस के आन्तरिक संगठन की दृष्टि से त्रिपुरी-कांग्रेस के लिए सभापति के चुनाव ने अकस्मात् ही कुछ अवांछनीय रूप प्राप्त कर लिया। विभिन्न प्रान्तों के प्रतिनिधियों ने मौलाना अब्बुलकलाम आज़ाद, श्री सुभाषचन्द्र बोस और डा० पट्टाभि सीतारामैया के नाम इस पद के लिए पेश किये। मौलाना आज़ाद ने अपना नाम वापस ले लिया। श्री सुभाष बोस ने एक वक्तव्य निकालकर चुनाव से अपना नाम वापस लेने में न केवल अनिच्छा प्रकट की, बल्कि फ़ेडरेशन-विरोध के सम्बन्ध में अपना दृढ़ मत प्रकट करके एक तरह से प्रतिनिधियों से अपने को ही पुनःनिर्वाचित करने की अपील भी की। वर्किंग कमेटी के कुछ सदस्यों ने एक वक्तव्य निकालकर बिना असाधारण अवस्थाओं के एक ही व्यक्ति के पुनर्निर्वाचन का विरोध किया। इसपर कांग्रेसी नेताओं में एक अवांछनीय-सा विवाद चल पड़ा। चुनाव हुआ और सुभाष बाबू को करीब २०० मत ज्यादा मिले। यद्यपि कुछ व्यक्तियों ने इसे वाम और दक्षिण पक्ष का रूप देने की कोशिश की और महात्मा गांधी ने भी इसे अपने नीति व सिद्धान्तों की पराजय समझकर दक्षिण-पक्षी नेताओं को नई वर्किंग कमेटी से अलग रहने की सलाह दी, तथापि वस्तुतः यह चुनाव गाँधीवाद अथवा दक्षिण या वाम-पक्ष की कसौटी पर नहीं लड़ा गया था। बहुत-से प्रतिनिधियों ने भिन्न-भिन्न कारणों से चुनाव में मत दिये। चुनाव के बाद दक्षिणपक्षी नेताओं से विभिन्न कारणों से रुष्ट कार्यकर्ताओं ने अवांछनीय स्थिति को और भी उग्र रूप दे दिया। श्री सुभाष बाबू के गांधीजी से मुलाकात होनेपर लोगों को आशा बन्ध रही थी, लेकिन मालूम पड़ता है कि स्थिति अन्दर-ही-अन्दर बहुत ख़राब हो चुकी थी। २२ फरवरी को वर्किंग कमेटी की बैठक थी कि अकस्मात् श्री सुभाष बीमार होगये। बाकी सब सदस्य वर्धा पहुँचे। गांधीजी से और परस्पर विचार-विनिमय के बाद सरदार पटेल, बा० राजेन्द्र प्रसाद, आचार्य कृपलानी, मौ० अब्बुलकलाम आज़ाद, श्री भूलाभाई देसाई, श्री जमनालाल बजाज, श्रीमती सरोजिनी नायडू, श्री पट्टाभि सीतारामैया, श्री जयरामदास दौलतराम, श्री हरिकृष्ण मेहताब, श्री शंकरराव देव और ख़ान

अब्दुल गफ्फार खाँ ने इस्तीफ़ा दे दिया। उन्होंने राष्ट्रपति को लिखा कि "हमने हाल की तमाम घटनाओं पर पूरी तौर पर ग़ौर कर लिया है और राष्ट्रपति-चुनाव पर आपके वक्तव्य भी पढ़े हैं।.........अब इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि हम लोग इस मौक़ेपर कार्यसमिति से इस्तीफ़ा देना अपना कर्तव्य समझते हैं और इसीलिए इस्तीफ़ा दे रहे हैं। आप बड़ी खुशी से ऐसी वर्किंग कमेटी बना सकते हैं, जो आपकी समिति व नीति के अनुकूल हो। हम समझते हैं कि अब ऐसा मौका आ गया है, जबकि देश के सामने साफ़-साफ़ नीति पेश की जानी चाहिए। वह नीति काँग्रेस के विभिन्न दलों या विचारों की खिचड़ी न हो।.........आपको विश्वास रखना चाहिए कि हम लोग जिन बातों में आप से सहमत होंगे, आपके साथ सहयोग करने के लिए तैयार रहेंगे।" यह इस्तीफ़ा केवल सैद्धान्तिक मतभेद पर न था, उसके अलावा भी कुछ और महत्त्व रखता था। पं० जवाहरलाल नेहरू अपने उग्र विचारों के लिए प्रसिद्ध हैं। उन्होंने भी वर्किंग कमेटी से इस्तीफ़ा दे दिया और एक लम्बा वक्तव्य प्रकाशित किया, जिससे स्थिति पर कुछ प्रकाश पड़ता है। उसके कुछ अंश निम्न-लिखित है :—"सुभाष बाबू के दुबारा राष्ट्रपति चुने जाने के मैं ख़िलाफ़ था। मैं भली-भांति जानता था कि इसके क्या नतीजे निकलेंगे। प्रजातन्त्र संस्थाओं में चुनाव-प्रतिस्पर्धा कोई अस्वाभाविक बात नहीं, लेकिन आजकल की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और भारत में राजनैतिक संकट की सम्भावना देखकर आजकल संयुक्त मोर्चे की सबसे ज्यादा ज़रूरत थी।" वाद-विवाद में बराबर प्रयुक्त होनेवाले 'वाम' और 'दक्षिण पक्ष' का ज़िक्र करते हुए आपने लिखा कि "इनसे इस समय हमें कोई मतलब नहीं। मैं जिन कारणों से इस नतीजे पर पहुँचा हूँ, उनका बताना शायद कठिन होगा और शायद अवांछनीय भी। चुनाव संघर्ष के दिनों में सुभाष बाबू ने अपने साथियों पर ऐसे इलज़ाम लगाये, जिन्हें सुनकर मुझे आश्चर्य और अत्यन्त खेद हुआ। जहाँतक मुझे मालूम है, वे निराधार थे। अगर वे सच हैं, तो वे काँग्रेस का नेतृत्व करने के बिलकुल योग्य नही। अगर वे सच्चे नहीं हैं, तो उन्हें बिना किसी शर्त के वापस लेना चाहिए। इसके सिवा और कोई बीच का रास्ता हो ही नहीं सकता। अविश्वास और सन्देह के वातावरण में रहकर उनके लिए कार्य करना कठिन है।.........मैंने सुभाष बाबू से कहा था कि 'दक्षिण' और 'वाम' शब्दों के ग़लत प्रयोग को ध्यान में रखते हुए उन्हें लिखित रूप में यह बता देना चाहिए कि राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में उनकी क्या स्थिति रहेगी, ताकि विचारविमर्श में सहायता मिल सके, लेकिन उन्होंने यह नहीं किया।.........इस समय वर्किंग कमेटी भंग हो चुकी है। राष्ट्रपति को जैसा कि वे चाहते हैं, काँग्रेस के सामने अपनी योजना को रखने की खुली छुट्टी है ।.........इन परिस्थितियों में मुझे खेद है

कि मैं स्वयं भी उनकी मदद न कर सकूँगा।" आगे इसी वक्तव्य में पंडितजी ने अव्यवस्था की निन्दा करते हुए कहा था कि "मैं उग्रदल का समाजवादी था और अब भी हूँ। लेकिन इसके साथ ही मैं महात्मा गांधी के उस शान्तिपूर्ण अहिंसातत्त्व को भी स्वीकार करता हूँ, जिसका गत २० वर्षों से बड़ी सफलता से प्रयोग किया जाता रहा है।"

यह संकट काँग्रेस के इतिहास में अभूतपूर्व था। सारा देश उन कर्णधारों के इस्तीफ़े का समाचार सुनकर स्तब्ध रह गया, जो पिछले २० सालों से भारतवर्ष के राष्ट्रीय संग्राम के महान् सेनापति थे और जिनपर देश को पूर्ण विश्वास था। श्री सुभाष बाबू ने उनके इस्तीफ़े स्वीकार कर लिये। फलतः कांग्रेस पार्लमेण्टरी समिति का अस्तित्व भी नहीं रहा। त्रिपुरी काँग्रेस से ठीक पहले इस आन्तरिक संकट ने एक ऐसी नाजुक हालत पैदा कर दी, जिस की किसीने कल्पना भी न की थी। त्रिपुरी में क्या होगा? क्या सब पुराने महारथी कांग्रेस से अलग हो जावेंगे? क्या राष्ट्रपति नई कार्यसमिति बनावेंगे या स्वयं इस्तीफ़ा दे देंगे? यही प्रश्न थे, जो त्रिपुरी कांग्रेस के प्रतिनिधियों और कांग्रेसियों को परेशान कर रहे थे। कांग्रेस से भिन्न राजनैतिक दल, सरकारी अधिकारी और विदेशों के राजनीतिज्ञ भी कांग्रेस के इस संकट में दिलचस्पी ले रहे थे और उत्सुकता से घटनाक्रम की प्रतीक्षा कर रहे थे।

गांधीजी का आमरण अनशन

यह परिस्थिति स्वयं कम विषम न थी, लेकिन अकस्मात् अकल्पित रूप से एक और भीषण घटना ने सारे देश का ध्यान अपनी ओर खींच लिया। यह घटना थी राजकोट के सम्बन्ध में महात्मा गाँधी का आमरण अनशन का निश्चय। परन्तु इसके लिए हमें कुछ दिन पीछे लौट चलना चाहिए। राजकोट के दुबारा सत्याग्रह की चर्चा हम पीछे कर चुके हैं। हम यह भी लिख चुके हैं कि गाँधीजी इसमें व्यक्तिगत रूप से काफ़ी दिलचस्पी ले रहे थे। राजकोट दरबार के अलावा उन्होंने रैजिडैण्ट पर भी सत्याग्रहियों के साथ भयंकर ज्यादती करने के आरोप लगाये थे। इसी सिलसिले में फरवरी के अन्तिम सप्ताह में राजकोट के रैज़िडैण्ट मि० गिबसन से उनकी तार द्वारा बातचीत चल रही थी। रैज़िडैण्ट ने पुलिस व अपने ऊपर लगाये गये आरोपों को बिलकुल असत्य बताया। गांधीजी ने उनसे शिकायत की थी कि कैदियों के साथ दुर्व्यवहार किया जा रहा है। इन आरोपों की स्वयं जांच करने के लिए गांधीजी २५ फरवरी को वर्धा से राजकोट की ओर रवाना होगये। इससे पहले उन्होंने सरदार पटेल को राजकोट-सत्याग्रह स्थगित करने की सलाह दी, ताकि शान्त वातावरण में जांच हो सके। इसके अनुसार सरदार पटेल ने सत्याग्रह स्थगित करवा

दिया । इन दिनों गांधीजी की मनोदशा क्या थी, यह उनके तारों व वक्तव्य के, जो रवानगी से पहले दिया गया था, निम्न उद्धरणों से पता चलता है—"मैं सचाई की खोज और शान्तिप्रतिष्ठाता के रूप में आ रहा हूँ । मेरी गिरफ्तार होने की इच्छा नहीं है । मैं स्वयं सारी बातें जानना चाहता हूँ । अगर सहकारियों पर झूठे आरोप लगाने का दोष सिद्ध होगा, तो मैं उसका प्रायश्चित्त करूँगा ।" "राजकोट के ठाकुर के वचनभंग से मुझे बड़ी तकलीफ़ हुई । शायद पूरी बात हम लोगों को मालूम नही हुई कि किन अवस्थाओं में लाचार होजाने के कारण राजकोट के ठाकुर साहब को जनता को दी गई प्रतिज्ञा भंग करनी पड़ी । मैं यह कहता हूँ कि अगर सारे हिन्दुस्तान का नहीं, तो कम-से-कम काठियावाड़ के राजाओं का यह कर्तव्य है कि वे भूल-सुधार करवायें । अगर विश्वास ही न रहा तो फिर कोई सम्मानजनक पारस्परिक समझौता ही असंभव हो जायगा । जब मैं विश्वास-भंग देखता हूँ, जैसाकि इस मामले में हुआ है, तो मुझे अपना जीवन भार-सा मालूम होने लगता है ।"

राजकोट के ठाकुर को अल्टीमेटम

२७, २८ फ़रवरी और १ मार्च को महात्माजी ने स्वयं पुलिस के अत्याचारों की जांच की । राजकोट के ठाकुर ने २६ दिसम्बर को सुधारसमिति बिठाने की जो घोषणा की थी, उसकी रोशनी में ठाकुर के पिछले व्यवहार की भी जाँच की । १ मार्च तक भी किसी ने यह नहीं सोचा था कि घटनाचक्र तेजी से किसी महान् संकट की ओर जारहा है ।

महात्मा गांधी ने खूब विचार और गम्भीर चिन्तन के बाद राजकोट के ठाकुर को एक पत्र लिखा । इसमें उन्होंने निम्नलिखित सात माँगें पेश की— (१) ता० २६ दिसम्बर को जिस घोषणा द्वारा प्रजा को शासनाधिकार देने पर विचार करने के लिए एक सुधारसमिति नियत होने की बात कही गई थी, उसे पुनरुज्जीवित किया जाय । (२) ता० २१ जनवरी का वह नोटिस रद किया जाय, जिसके द्वारा पहले नोटिस का खण्डन किया गया था । (३) प्रजापरिषद् के ५ प्रतिनिधियों को सुधारसमिति में लिया जाय और उनमें से एक सत्याग्रह आन्दोलन के नेता श्री ढेबर हों । (४) शासन सुधारसमिति के अध्यक्ष भी श्री ढेबर हो । (५) कमेटी के तीन सरकारी प्रतिनिधियों को वोट देने का अधिकार न हो । (६) राजकोट एडवाइज़री कौंसिल २६ दिसम्बर की घोषणा की भावना का पालन करे और शासन सुधारसमिति के सदस्यों की नियुक्ति गांधीजी की सलाह से की जाय । (७) सब सत्याग्रही आज ही (गुरुवार) रिहा कर दिये जावें, जुरमाने वापिस कर दिये जावें और दमनकारी आज्ञायें वापस लेली जावें । इन सात माँगों का उल्लेख

करने के बाद गांधीजी ने लिखा कि अगर कल शुक्रवार दोपहर के १२ बजे तक आप मेरी माँगें स्वीकार न कर सकें, तो मेरा अनशन शुरु होजायगा और तबतक जारी रहेगा, जबतक कि मेरी माँगें स्वीकृत न हो जावें।

महात्मा गांधी की इस सम्बन्ध में जो मनोदशा थी, उसका कुछ परिचय ऊपर दिया जा चुका है। उन्होंने २ मार्च को पत्र-प्रतिनिधियों की बातचीत में अपनी मनोदशा बिलकुल उंडेल दी। उन्होंने कहा कि––

"इस नाजुक मौक़े पर तो मैं सिर्फ़ यही कहना चाहूँगा कि रातभर के जागरण के बाद मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि जो लड़ाई स्थगित हो चुकी है, उसे फिर से शुरू न करना हो और जिन अत्याचारों के बारे में मैंने बहुत-कुछ सुना है और जिनका मुझे अख़बारों को दिये हुए अपने वक्तव्य में भी उल्लेख करना पड़ा है, उन्हें भी फिर से शुरू न कराना हो, तो मुझे इस मर्मान्तिक वेदना का अन्त करने के लिए कोई कारगर उपाय करना चाहिए––और, ईश्वर ने मुझे यह उपाय बतला दिया।"

इसी बातचीत के सिलसिले में उन्होंने कहा कि—"यह भी याद रहना चाहिए कि मेरा राजकोट व उसके शासकों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। ठाकुर साहब को अपने पुत्र की भांति समझते हुए मुझे उनके स्वभाव को बदलने का अधिकार है। वचन-भंग मुझे अन्दर तक हिला देता है, विशेषकर तब, जबकि मेरा भी वचन करनेवाले से सम्बन्ध हो और यदि इसे ठीक करने में मुझे अपना जीवन भी देना पड़े, तो मैं एक पवित्र व गम्भीर वचन को पूरा कराने के लिए उसे देने को तैयार हूँ।"

आमरण अनशन प्रारम्भ

गाँधीजी को ३ मार्च शुक्रवार १२ बजे तक राजकोट ठाकुर का कोई उत्तर नहीं मिला। उन्होंने १२ बजे प्रार्थना के साथ राष्ट्रीय शाला में महान् अग्निपरीक्षा का व्रत शुरू कर दिया। करीब १॥ बजे ठाकुर सा० का उत्तर मिला, जिसमें गांधीजी के समिति-सम्बन्धी परामर्श को २६ दिसम्बर की घोषणा के अनुकूल न मानते हुए मानने से इन्कार किया गया था। रियासत के शासन की सारी ज़िम्मेदारी अपनी मानते हुए किसी दूसरे के हस्तक्षेप की इजाज़त देने में भी असमर्थता प्रकट की गई थी। गांधीजी ने इस उत्तर को पढ़कर कहा कि "यह पत्र तो आग में घी डालने के समान है। मुझे आशा है कि मैं प्रसन्नतापूर्वक इस अग्निपरीक्षा में उत्तीर्ण होऊँगा। मै यह भी जानता हूँ कि जो काम मेरे जीवन में नहीं हुआ, वह मेरे बलिदान के बाद अवश्य पूरा होगा।" काठियावाड़ के राजाओं और राजनीतिज्ञों की ओर निर्देश करते हुए उन्होंने कहा कि "मेरे व्रत से वे अपनी राजनीति को शुद्ध और पवित्र बनाने की शिक्षा लें।"

वायसराय ने हल ढूँढ निकाला

गांधीजी के इस आमरण अनशन के समाचार ने सारे देश में एक तहलका सा मचा दिया। राष्ट्रपति सुभास बाबू ने ५ मार्च को राजकोट-दिवस मनाने की आज्ञा दी। यह दिवस तमाम मुल्क में बड़े उत्साह के साथ मनाया गया। सारे देश ने सरकार से भारत की सर्वश्रेष्ठ विभूति की प्राणरक्षा करने के लिए हस्तक्षेप करने का अनुरोध किया। महात्मा गांधी के आमरण अनशन ने केवल ३५ करोड़ भारतीयों के हृदय को ही नहीं हिला दिया था, लेकिन भारत-सरकार भी उससे चिन्ता में पड़ गई थी। अनेक प्रान्तीय सरकारों ने स्थिति की भीषणता और उनके स्तीफ़े देने की संभावना से केन्द्रीय सरकार को परिचित करा दिया था। ब्रिटिश सरकार भी परेशान थी, सारी ज़िम्मेदारी उसी पर डाली जा रही थी, सर्वोच्च सत्ता के नाते उसका फ़र्ज़ है कि वह इस मामले में कांग्रेस से सहयोग करे। महात्मा गांधी के शब्दों में यह कहा जाने लगा था कि यदि सर्वोच्च सत्ता प्रान्तों में कांग्रेस का सहयोग चाहती है, तो उसे रियासतों में भी कांग्रेस से मित्रभाव रखना होगा। यदि वह वहाँ मित्रभाव नहीं दिखा सकती, तो उसे प्रान्तों में कांग्रेस के सहयोग की आशा छोड़ देनी चाहिए। वायसराय लार्ड लिनलिथगो ने स्थिति की भीषणता समझने में देर नही की। वे एकदम अपना राजपूताने का दौरा स्थगित करके दिल्ली पहुँच गये। रेज़िडेण्ट की मार्फ़त गाँधीजी ने वायसराय को स्थिति से पूर्णतः परिचित कराया। वायसराय ने स्थिति की गंभीरता को देखते हुए विचार-विनिमय के बाद शीघ्र ही निर्णय किया और गांधीजी को रेज़िडेण्ट की मार्फ़त निम्न आशय का जवाब दिया—

"मैं आपकी स्थिति समझता हूँ। आप वचनभंग को बहुत महत्त्व देते हैं, यह आपके वक्तव्य से स्पष्ट है। मैं यह भी अनुभव करता हूँ कि ठाकुर साहब की (२६ दिसम्बर की) घोषणा और उसके साथ सरदार पटेल को भेजे जानेवाले पत्र का अभिप्राय समझने में सन्देह हो सकता है। लेकिन मेरी सम्मति में इसका सर्वोत्तम हल यह होगा कि भारतवर्ष के सबसे प्रमुख न्यायाधिकारी—फैडरल कोर्ट के चीफ़ जस्टिस के पास निर्णय के लिए यह मामला भेज दिया जाय। चीफ़ जस्टिस ही यह निर्णय करें कि ठाकुर की घोषणा व सरदार पटेल को भेजे गये पत्र के प्रकश में सुधार-समिति का किस तरह संगठन किया जाय। यदि इसके बाद भी उक्त घोषणा के सम्बन्ध में कोई सन्देह उत्पन्न हो, तो न्यायाधीश ही उसका अन्तिम निर्णय करें।" वायसराय ने यह भी स्पष्ट किया था कि "जहाँ ठाकुर साहब घोषणा में की गई प्रतिज्ञा को पूरा करने का वायदा करते हैं, वहाँ मैं भी यह आश्वासन देता हूँ कि मैं अपने प्रभाव का पूर्ण उपयोग करूँगा कि ठाकुर अपने वचन का पालन करें। इससे आपकी सब आशंकाएँ दूर हो जावेंगी।"

अनशन समाप्त

महात्मा गांधीजी ने इसके उत्तर में लिखा कि यद्यपि आपका सन्देश कई बातों में मूक है, तो भी वह अनशन-व्रत समाप्त करके करोड़ों भारतीयों की चिन्ता दूर करने के लिए पर्याप्त है । जिन बातों का ज़िक्र आपके पत्र में नहीं है, उनका दावा मैं नहीं छोड़ता, लेकिन वे बातें परस्पर बातचीत से भी तय हो सकती हैं । ज्योंही डाक्टरों ने मुझे आज्ञा दी, मैं दिल्ली आऊँगा । ७ मार्च को दुपहर के २ बजकर २५ मिनटपर ९९ घण्टे के अनशन के बाद गांधीजी ने संतरे का रस लेकर अपना अनशन तोड़ दिया और इस तरह राष्ट्र पर आनेवाला महान् संकट, जिसने समस्त भारत को छा रखा था, टल गया ।

अनशन समाप्ति के बाद गांधीजी ने पत्र-प्रतिनिधियों को एक वक्तव्य दिया, जिसके मुख्य अंश निम्नलिखित हैं :—"मेरी सम्मति में उपवास की यह मंगल समाप्ति करोड़ों व्यक्तियों की मंगल प्रार्थना का उत्तर है।···मैं यह भी जानता हूँ कि भारत से बाहर शेष संसार के भी अनेक मनुष्यों की सहानुभूति और प्रार्थनाएँ मेरे साथ थीं । लेकिन समझौते का मुख्य श्रेय वायसराय को ही है ।

"इस व्रत से लोगों का ध्यान रियासतों की ओर केन्द्रित होगया है । मुझे आशा है कि सभी यह स्वीकार करेंगे कि रियासती समस्या को सुलझाने में देरी नहीं होनी चाहिए । मैं राजाओं को यह विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि मैं राजकोट में उनके मित्र के रूप में आया था । मैंने यहाँ आकर देखा कि सत्याग्रही दबाये नही जा सकते । उनपर भीषण अत्याचारों की कहानियाँ भी मैंने सुनीं और अनुभव किया कि यदि राजकोट में सत्याग्रह जारी रहा, तो मानव-स्वभाव की नीच प्रकृति खुलकर खेलने लगेगी और न केवल राजकोट के शासकों व सत्याग्रहियों में, बल्कि सर्वत्र राजा और प्रजा में भीषण संग्राम छिड़ जायगा । मैं जानता हूँ कि भारत में यह विचार ज़ोर पकड़ रहा है कि राजाओं का तो सुधार हो ही नही सकता और बर्बरता के युग के इस अवशेष का अन्त किये बिना भारत स्वतन्त्र नहीं हो सकता। मेरी हार्दिक सम्मति इसके विपरीत है । अहिंसा और इसलिए मनुष्य की सत्प्रकृति में विश्वास रखने के कारण मैं इससे भिन्न सम्मति रख भी नहीं सकता । राजाओं का भी भारत में एक स्थान है । भूतकाल की सब प्रथाओं को नष्ट किया भी नहीं जा सकता । मेरा विश्वास है कि यदि राजा भूतकाल से शिक्षा लेंगे और समय के साथ चलेंगे, तो सब-कुछ ठीक हो जायगा । लेकिन थिगड़ियाँ लगाने या थोथे सुधारों से यह समस्या हल न होगी । उन्हें साहसपूर्ण क़दम उठाने होंगे । वे भले ही राजकोट का अनुकरण न करें, लेकिन उन्हें जनता को पर्याप्त अधिकार अवश्य देने चाहिएँ । इसके सिवा भारत में रक्तमय क्रान्ति रोकने का मेरी सम्मति में और

कोई उपाय नहीं है ।" इसी वक्तव्य में भय्यतों, गिरासियों और मुसलमानों को उनके हितों के संरक्षण का आश्वासन देते हुए अन्त में गांधीजी ने कहा कि— "मुझे ठाकुर साहब की चिन्ता है, मुझे दरबार वीरावाला की भी चिन्ता है । मैंने उनकी कठोर आलोचना की है, लेकिन मित्र के नाते । मैं फिर यह दुहराता हूँ कि मैं ठाकुर साहब के पिता की तरह हूँ । अपने आलसी कामचोर लड़के के साथ जैसा मैं करता हूँ, उससे अधिक कठोर व्यवहार मैंने उनसे नहीं किया ।.........राजकोट काठियावाड़ का केन्द्र है । यदि यहाँ उत्तरदायी शासन दे दिया गया तो काठियावाड़ की अन्य रियासतें भी स्वयं राजकोट की पंक्ति में आजावेंगी ।" ७ मार्च को राजकोट-सत्याग्रह स्थगित होजाने के कारण सब सत्याग्रही क़ैदी भी रिहा कर दिये गये ।

त्रिपुरी में विषम परिस्थिति

लेकिन गाँधीजी का अनशन समाप्त होने से पहले कांग्रेस के प्रतिनिधि त्रिपुरी की ओर रवाना हो चुके थे । और तबतक राजकोट से कोई आशाजनक समाचार नहीं आ रहे थे, इसलिए जहाँ राष्ट्रपति-चुनाव के संकट के कारण उन्हें भविष्य निराशामय दीख रहा था, वहाँ महात्माजी के अनशन से वे अपने हृदय पर एक भारी बोझ-सा भी अनुभव कर रहे थे । विपत्ति कभी अकेली नहीं आती । त्रिपुरी के प्रतिनिधियों की चिन्ता के लिए यही दो बातें कम न थीं, परन्तु उधर राष्ट्रपति की भीषण बीमारी ने स्थिति और भी नाज़ुक करदी । हम पहले लिख चुके हैं कि वर्धा काँग्रेस कार्यसमिति की बैठक में भी वे बीमारी के कारण उपस्थित न हो सके थे । तबसे अबतक वे रोग-शय्या पर ही थे । लोगों का ख़याल था कि वे शायद काँग्रेस में ही उपस्थित न हो सकें । कुछ लोग यह भी कल्पना कर रहे थे कि वे कार्य-संचालन में बीमारी की वजह से असमर्थ होने या विकट परिस्थिति के कारण इस्तीफ़ा दे दें । यदि वे इस्तीफ़ा दे दें और त्रिपुरी न आ सकें, तो कांग्रेस का कार्य कैसे होगा ? वर्किंग कमेटी तो इस्तीफ़ा दे ही चुकी थी । उसकी ओर से कांग्रेस को कोई निर्देश मिलने की संभावना न थी । पिछले सालों की भाँति कोई प्रस्ताव भी उसकी ओर से नहीं आना था । राष्ट्रपति से लोग किसी कार्यक्रम और नेतृत्व की आशा कर रहे थे, वे बीमार थे । इसलिए प्रतिनिधियों ने निजू तौरपर बहुत-से प्रस्तावों की सूचना कार्यालय को भेज दी थी । अधिकांश प्रस्ताव एक दूसरे के विरोधी थे, उनमें न कोई संगति थी, न कोई निश्चित योजना ।

राष्ट्रपति की बीमारी

यह भीषण परिस्थितियाँ थीं, जिनमें त्रिपुरी कांग्रेस होने लगी थी । राष्ट्रपति ने वीर योद्धा की तरह मृत्यु से भी लड़ने का निश्चय कर लिया था । वे डाक्टरों

की सलाह की अवहेलना करके रुग्ण अवस्था में ही ६ मार्च को त्रिपुरी पहुँचे। रेल गाड़ी में उन्हें १०१ का बुखार था। जबलपुर स्टेशन पर उतरकर वे स्ट्रैचर द्वारा एम्बुलेंस कार में बिठाये गये, जहाँ से वे अपने डेरे पर पहुँचे। ५१ हाथियों के रथ पर राष्ट्रपति का जलूस निकालने की स्वागत समिति की सारी योजना रह गई।

आन्तरिक मतभेद

७ मार्च को आल इण्डिया काँग्रेस कमेटी की बैठक थी। राष्ट्रपति श्री सुभास बोस बीमारी के कारण उपस्थित न हो सके थे, इसलिए मौ० अब्बुल कलाम आज़ाद के सभापतित्व में कार्रवाई शुरू हुई। सबसे पहले पं० जवाहरलाल नेहरू ने म० गांधी के उपवास की समाप्ति का समाचार सुनाया। इसका सभी ने अत्यन्त हर्ष से स्वागत किया। इससे राष्ट्र के हृदय पर जो बड़ा भारी बोझ पड़ा हुआ था, वह उतर गया। लेकिन इसके साथ ही आन्तरिक मतभेद की वह आग फिर स्पष्ट हो उठी, जो महात्मा जी के अनशन के राष्ट्रीय संकट के कारण दब-सी गई थी। आ० इं० काँ० कमेटी की पहली बैठक यद्यपि सिर्फ़ १५ मिनट हुई थी, तथापि बहस में यह स्पष्ट दीखने लगा था कि प्रतिनिधियों में समझौते की बजाय संघर्ष की भावना ज्यादा काम कर रही है। दरअसल हालत बहुत विचित्र थी। वर्किंग कमेटी के न रहने के कारण प्रतिनिधियों के सामने न कोई कार्यक्रम था, न कोई नेतृत्व। राष्ट्रपति भी बीमारी के कारण अपना कोई कार्यक्रम निश्चित रूप से नहीं रख सके। प्रतिनिधियों ने पचासों प्रस्ताव निजीतौर से पेश करने की सूचना दी थी। इन प्रस्तावों में कुछ प्रस्ताव थोड़े बहुत शाब्दिक भेद के साथ एक-से थे, लेकिन अधिकांश प्रस्ताव एक-दूसरे के विरोधी थे। पर इन्हीं प्रस्तावों के द्वारा यह पता चलता था कि प्रतिनिधियों में किस तरह अनेक विचार काम कर रहे हैं। कुछ प्रस्ताव गाँधीजी की नीति व विचार-धारा पर पूर्ण विश्वास प्रकट करते हुए गांधीजी के ही नेतृत्व को स्वीकार करने का अनुरोध करते थे। कुछ प्रस्ताव राष्ट्रपति सुभास बोस की नीति के समर्थन में थे। राष्ट्रपति सुभास पर अविश्वास के भी एक प्रस्ताव के पेश करने की सूचना मिली थी। काँग्रेस के पार्लमेण्टरी प्रोग्राम और रियासती नीति में क्रान्तिकारी परिवर्तन, नई राष्ट्रीय सेना क़ायम करने, ज़मींदारी पद्धति की समाप्ति, कंस्टिट्यूएण्ट असेम्बली, सरकार से जल्दी संग्राम छेड़ने, कांग्रेस के विधान में परिवर्तन, कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों की नीति से असंतोष और उग्र परिवर्तन, किसान संघों की कांग्रेस द्वारा स्वीकृति आदि विषयों पर परस्पर विरोधी प्रस्ताव आये हुए थे। इन सबको मुख्यतया तीन भागों में बांटा जा सकता है। पहली श्रेणी उनकी थी, जो महात्मा गाँधी और पुरानी कांग्रेस वर्किंग कमेटी की नीति

पर पूर्ण विश्वास प्रकट करते थे, वे रियासतों के सम्बन्ध में, कांग्रेसी सरकारों की नीति के सम्बन्ध में और काँग्रेस विधान में—सत्य-अहिंसा के सिद्धान्त को कायम रखने के सम्बन्ध में पुरानी वर्किंग कमेटी के साथ थे। कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी की ओर से भी अपने प्रकट सिद्धान्तों के कारण उग्र नीति के समर्थक प्रस्ताव पेश किये गये। इनके अलावा एक तीसरी श्रेणी थी, जो उग्र नीति की समर्थक तो थी, लेकिन उसकी तह में उग्र सिद्धान्तों की अपेक्षा राष्ट्रपति सुभास का व्यक्तिगत पक्षपात अधिक था। इसकी सम्मति में गांधीजी की नीति पर विश्वास का प्रस्ताव राष्ट्रपति पर अविश्वास का प्रस्ताव लाना था। इस दल में रायवादी थे, कुछ कम्यूनिस्ट थे, समस्त बंगाली प्रतिनिधि थे, श्री नरीमैन थे, श्री अणे थे और श्री श्रीनिवास आयंगर थे, जो एक लम्बे अज्ञातवास के बाद राष्ट्रपति चुनाव के संघर्ष के प्रकरण में फिर राजनैतिक क्षेत्र में आ गये थे। कुछ सोशलिस्ट भी इस दल के साथ थे।

पन्तजी का प्रस्ताव

त्रिपुरी के वातावरण में राष्ट्रपति बनाम गांधी का भेद अधिकाधिक गहरा हो रहा था। सम्पूर्ण मतभेद को श्री राजगोपालाचार्य ने इस तरह प्रतिनिधियों के सामने रखा कि—क्या तुम पुराने अनुभवी मल्लाह की किश्ती में बैठकर अपने को सुरक्षित समझोगे या एक नये अपरिचित मल्लाह के हाथ में अपना भाग्य सौंप देना चाहते हो? प्रश्न यह था कि गाँधीजी, जो पिछले २० साल से राष्ट्र का सफल नेतृत्व करते आ रहे हैं और जिन्होंने अपनी अद्भुत रणकुशलता, संगठनशक्ति, राजनीतिज्ञता, तपस्या और आत्मबलिदान द्वारा राष्ट्र को थोड़े से अरसे में एक सदी आगे बढ़ा दिया है, देश के नेता रहें या उग्रपक्षी सुभासबाबू और उनके नये साथी, जिनकी नीति और कार्यक्रम अभीतक निश्चित और स्पष्ट रूप में राष्ट्र के सामने न आये थे। इसके साथ-साथ व्यक्तिगत पक्षपात भी बराबर अपना प्रभाव डाल रहा था। कोई ऐसा रास्ता नजर न आता था, जिसपर सभी दल सहमत हो जावें। नेताओं की आपस की लम्बी चर्चा और लगातार कोशिशों से भी समझौते की सूरत न निकल सकी। पं० जवाहरलाल नेहरू, जिनपर उग्रपक्षी भी विश्वास करते थे, कोई सर्वसम्मत समझौता न निकल सके। महात्मा गांधी, जो ऐसे विकट अवसरों पर सदा मार्गप्रदर्शन करते हैं, अभी उपवास के बाद यात्रा करने लायक न होने के कारण आ न सके थे। बहुत से लोग काँग्रेस में एकता की आवश्यकता अनुभव कर रहे थे, लेकिन कोई दूसरे की बात मानने को तैयार न था। आपस की चर्चा में उग्रता बढ़ रही थी। यह सन्देह प्रतिक्षण बढ़ रहा था कि काँग्रेस में मतभेद उग्र रूप धारण करके उसे दो टुकड़ों में विभक्त कर देगा। दक्षिणपक्षी नेताओं के

सामने मार्ग स्पष्ट था कि गांधीजी का नेतृत्व जिस तरह भी हम पा सकें, वही करना चाहिए। वे इसी में राष्ट्र की मुक्ति मानते थे। वर्किंग कमेटी के १२ सदस्यों ने अपने त्यागपत्र में यह स्पष्ट लिखा था कि "अब ऐसा मौक़ा आ गया है, जबकि देश के सामने साफ़-साफ़ नीति पेश की जानी चाहिए।" बहुत से वामपक्षी भी गांधीजी के सहयोग को अनिवार्य तो मानते थे, लेकिन सुभासबाबू और गांधीजी में कोई सामंजस्य किसी तरह न कर पाते थे। वे न सुभास को छोड़ना चाहते थे, न गांधीजी को। पर इसके लिए उन्हें मार्ग न सूझता था। कुछ ऐसे भी प्रतिनिधि थे, जो अपने को अत्यन्त उग्रवादी कहते थे और गांधीवाद के आलोचक थे। अन्त में पं० गोविन्दवल्लभ पन्त एक निश्चित प्रस्ताव लेकर सामने आये। यह प्रस्ताव अपने आप में पूर्ण और स्पष्ट था। इसमें कोई लागलपेट न थी, विभिन्न दलों को महज़ सन्तुष्ट करने के लिए राजनैतिक गोलभाषा का भी प्रयोग इस प्रस्ताव में न किया गया था। यह प्रस्ताव काँग्रेस की भावी नीति को बिलकुल स्पष्ट और असंदिग्ध शब्दों में रख रहा था, जिससे पीछे उसके शब्दों की खींचतान न की जा सके। राष्ट्रपति दूसरे दिन अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी में स्ट्रैचर पर उपस्थित हुए। उन्होंने इस प्रस्ताव को अनियमित करार दिया, लेकिन विषयसमिति में प्रस्ताव रखने की आज्ञा दे दी। वहां यह प्रस्ताव तीव्र विवाद के बाद बहुमत से पास होगया। सब संशोधन गिर गये। यह प्रस्ताव निम्नलिखित था :—

"राष्ट्रपति के चुनाव के सिलसिले में और उसके बाद के विवादों से कांग्रेस और देश में जो भ्रम उत्पन्न हो गये हैं, उन्हें ध्यान में रखते हुए अपनी स्थिति स्पष्ट करने और अपनी सामान्य नीति की घोषणा करने के लिए यह कमेटी उन मौलिक नीतियों और कार्यक्रम पर अपना दृढ़ विश्वास प्रकट करती है, जिनके अनुसार महात्मा गांधी के नेतृत्व में पिछले सालों में पालन किया गया है। कमेटी की यह स्पष्ट सम्मति है कि भविष्य में भी इन नीतियों में कोई अन्तर नहीं होना चाहिए और उन्ही नीतियों के आधार पर कांग्रेस कार्यक्रम का संचालन होना चाहिए।

"यह कमेटी गत वर्ष की वर्किंग कमेटी में अपना विश्वास प्रकट करती है और उसके सदस्यों में से किसी भी सदस्य के ख़िलाफ़ लगाये गये लांछन पर खेद प्रकट करती है।

"अगले बरस भी संकटमय स्थिति उत्पन्न हो सकती है, और एकमात्र महात्मा गांधी ही ऐसे संकट-काल में काँग्रेस और देश का नेतृत्व कर सकते हैं, यह अपने ध्यान में रखते हुए, कमेटी यह आवश्यक समझती है कि कांग्रेस की वर्किंग कमेटी को उनका पूर्ण विश्वास प्राप्त हो। और इसलिए यह कमेटी राष्ट्रपति से अनुरोध करती है कि वे महात्मा गाँधी की इच्छा के अनुसार आगामी वर्ष की कार्यसमिति नियुक्त करें।"

राष्ट्रपति के चुनाव में श्री पट्टाभि सीतारमैया की हार को महात्मा गांधी ने अपनी और अपने सिद्धान्तों व नीति की पराजय घोषित किया था। गांधीजी की तीव्र इच्छा के विरुद्ध भी सुभासबाबू चुनाव के लिए खड़े हुए थे और जीत गये थे। इस लिए इस प्रस्ताव के समर्थकों की सम्मति में यह ज़रूरी था कि यदि राष्ट्र को गाँधीजी के नेतृत्व की इच्छा हो, तो उनमें और उनके सिद्धान्तों में कांग्रेस पूर्ण विश्वास प्रकट करे। इसके सिवा महात्माजी के नेतृत्व पाने का दूसरा कोई मार्ग ही न था। यही मुख्य उद्देश्य था, जिससे प्रेरित होकर इतने स्पष्ट और निस्संदिग्ध रूप में यह प्रस्ताव पेश किया गया था। लेकिन जितनी आसानी से यह प्रस्ताव विषय समिति में पास हो गया, उतनी ही आसानी से कांग्रेस के खुले अधिवेशन में पास न हो सका। अभी कांग्रेस के रंगमंच पर एक और दुःखप्रद अभिनय होना था। लेकिन उसकी चर्चा से पहले राष्ट्रपति की चर्चा कर लें।

राष्ट्रपति का भाषण

कांग्रेस का खुला अधिवेशन निराशा और आशा, अंधकार और प्रकाश तथा पारस्परिक पार्टीबाज़ी और समझौते की इच्छा के द्वन्दमय वातावरण मे शुरू हुआ। राष्ट्रपति ज्यादा बीमार थे, इसलिए स्वयं उपस्थित न हो सके। स्वागताध्यक्ष सेठ गोविन्ददास के भाषण के बाद मौलाना आज़ाद के सभापतित्व में कार्यवाही शुरू हुई। आचार्य नरेन्द्रदेव ने राष्ट्रपति सुभास का भाषण, जो बीमारी के कारण न ठीक समय पूरा-पूरा लिखा जा सका और न प्रकाशित हो सका था, पढ़ा। भाषण अत्यन्त संक्षिप्त था, पर फिर भी उसमें राष्ट्रपति के मनोभाव स्पष्टता से प्रकट हो रहे थे। राष्ट्रपति ने मिश्री-प्रतिनिधियों के स्वागत, अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति और वर्किंग कमेटी के इस्तीफ़े की चर्चा के बाद कहा :—

"मैं यह अनुभव करता आया हूँ कि अब वह समय आगया है, जब हमें स्वराज्य का सवाल उठाकर अल्टीमेटम के रूप में अपनी राष्ट्रीय मांग ब्रिटिश-सरकार के सामने रख देनी चाहिए। वह समय बहुत पीछे निकल गया है, जब हम संघ-शासन की योजना के अपने ऊपर लादे जाने के समय की इन्तज़ार कर सकते थे। अब सवाल यह नहीं है कि संघ-विधान की योजना कब हमारे गले उतारी जायगी। समस्या यह है कि यदि कुछ साल के लिए जबतक यूरोप में शान्ति और स्थिरता का वातावरण पैदा नहीं हो जाता, ब्रिटिश सरकार अपनी सुविधा के लिए संघ-योजना को ताक पर रखदे, तो हमारा क्या कर्तव्य होगा ? इसमें कोई सन्देह नहीं है कि यदि यूरोप में एक बार शान्ति स्थापित होगई, चाहे वह राष्ट्रों के समझौते के द्वारा हो, चाहे किसी अन्य उपाय से, तो ग्रेटब्रिटेन अपनी कठोर साम्राज्य-

नीति अख्तियार करेगा। अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र में अपने को कमज़ोर समझकर ही ब्रिटिश-सरकार इस समय फ़िलस्तीन में यहूदियों के विरुद्ध अरबों से मेल करने का प्रयत्न कर रही है।

"इसलिए मेरी सम्मति में हमें ब्रिटिश-सरकार के सामने अपनी मांगें अल्टि-मेटम के रूप में रख देनी चाहिए और जवाब के लिए एक अवधि निर्धारित कर देनी चाहिए। यदि इस मियाद में कोई उत्तर न मिले या असंतोषजनक उत्तर मिले, तो अपनी राष्ट्रीय मांग को पूरा करवाने के लिए अपनी शक्ति का उपयोग किया जाय। हमारे पास भद्रअवज्ञा या सत्याग्रह की शक्ति है। ब्रिटिश सरकार आज इस स्थिति में नहीं है कि वह दीर्घकाल तक अखिल भारतीय सत्याग्रह के संघर्ष का मुकाबला कर सके।

"मुझे यह देखकर दुःख होता है कि कांग्रेस में कुछ लोग ऐसे निराशावादी हैं, जो यह समझते हैं कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर बड़ा हमला करने का अभी समय नहीं आया है। किन्तु वस्तुस्थिति को देखते हुए मुझे निराश होने का कोई आधार नहीं दीखता। आठ प्रान्तों में कांग्रेस के हाथ में शक्ति आने के फलस्वरूप हमारे राष्ट्रीय-संगठन की शक्ति और मर्यादा बहुत बढ़ गई है। जन-आन्दोलन ने समस्त ब्रिटिश भारत में बड़ी तरक्की की है। इसके अलावा देशी राज्यों में भी अभूतपूर्व जागृति दिखाई देती है। स्वराज्य की ओर अग्रसर होने के लिए हमारे राष्ट्रीय इतिहास में अब और अधिक उपयुक्त अवसर कब आ सकता है और खासकर उस हालत में, जब अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति भी हमारे अनुकूल हो।.........यदि हम केवल अपने मतभेदों को दूर करदें, सम्पूर्ण शक्तियों का संचय करलें और राष्ट्रीय संग्राम में अपनी पूरी शक्ति लगादें, तो हम ब्रिटिश साम्राज्यवाद पर ऐसा हमला कर सकते हैं; जिसका मुकाबिला वह नहीं कर सकता। क्या हम वर्तमान अनुकूल परिस्थिति से अधिकाधिक लाभ उठाने की राजनैतिक दूरदर्शिता दिखावेंगे या राष्ट्र के जीवन में आनेवाले इस दुर्लभ अवसर को खो देंगे?"

रियासतों में कांग्रेस के हस्तक्षेप के प्रतिबन्ध को हटाने, किसान व मजदूर आन्दोलन से निकट सम्पर्क करने और आपसी मतभेद दूर करने की भी चर्चा राष्ट्र-पति ने अपने भाषण में की। मिश्री-प्रतिनिधियों का त्रिपुरी कांग्रेस में आना एक विशेष घटना थी। पं० जवाहरलाल नेहरू ने उनका स्वागत किया और उसके उत्तर के बाद पहले दिन की बैठक समाप्त हुई।

दुःखपूर्ण दृश्य

दूसरे दिन ११ मार्च को कांग्रेस में जो दुःखपूर्ण दृश्य देखने में आया, वह

पिछले ३० सालों के कांग्रेस के इतिहास में कभी देखने में न आया था। कुछ लोगों का ख़याल था कि पन्तजी का प्रस्ताव राष्ट्रपति सुभास पर निन्दा का प्रस्ताव है, यद्यपि पन्तजी ने अपने भाषण में यह स्पष्ट कर दिया था कि उनकी मंशा राष्ट्रपति पर अविश्वास करने की नहीं है और न इस प्रस्ताव में कोई ऐसी बात ही है। उनके कथनानुसार यह प्रस्ताव तो महज़ देश, गांधीजी का नेतृत्व पा सके, इसके लिए उचित वातावरण बनाने के लिए था। प्रस्ताव के विरोधी वर्किंग कमेटी के सदस्यों पर लाञ्छन लगाने पर खेद प्रकाश करने मे बहुत असंतुष्ट थे। उनका कहना था कि यह प्रतिशोध की भावना से किया गया है, लेकिन पन्तजीने कहा कि जबतक हम नेताओं के सम्बन्ध में लगाये गये लाञ्छन से अपनी स्पष्ट असहमति प्रकट नहीं कर देते, हम उनका सहयोग प्राप्त नहीं कर सकते। क्या आप मातृभूमि की सेवा में अपने बाल पकाने की, अपने नेताओं को यही क़ीमत देना चाहते हैं। यदि उनपर इस जंगलीपन से आक्रमण किया जाता है, तो क्या आप खेदप्रकाश भी नहीं करना चाहते। राष्ट्रपति ने अपने वक्तव्य में जनता के अपवाद के रूप में उन नेताओं पर ब्रिटिश साम्राज्यवाद से फ़ैडरेशन के सम्बन्ध में समझौता करने का अभियोग लगाया है। इससे उनके सम्बन्ध में जो ग़लतफ़हमी फैल गई है, क्या वह दूर नहीं की जानी चाहिए ? वे संदिग्ध वातावरण में कांग्रेस से कैसे सहयोग कर सकते हैं ?

इस प्रस्ताव पर यदि केवल प्रस्ताव के गुण-दोष विवेचन से विचार किया जाता, तब तो कोई बात न थी, लेकिन प्रस्ताव के विरोधियों ने इसे राष्ट्रपति की भीषण बीमारी और इस प्रस्ताव के पास होने से उनपर पड़ने वाले सम्भावित प्रभाव से जोड़ दिया। इनका कहना था कि जब राष्ट्रपति भीषण रोगशय्या पर पड़े हैं, तो इस प्रस्ताव का, जो उन लोगों की सम्मति में राष्ट्रपति पर निन्दा का प्रस्ताव था, उनके स्वास्थ्य पर भीषण प्रभाव पड़ेगा। इसलिए इसे वापस ले लिया जाय या इसमें उचित संशोधन किया जाय। परिस्थिति को विषम देखकर श्री अणे ने यह प्रस्ताव पेश किया कि राष्ट्रपति के स्वास्थ्य की भयावह स्थिति को देखते हुए यह अच्छा होगा कि पन्तजी का प्रस्ताव किसी और मौक़े पर आल इण्डिया कांग्रेस कमेटी के सामने पेश किया जाय। पन्तजी ने भी राष्ट्रपति के स्वास्थ्य पर चिन्ता प्रकट करते हुए इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया। मौलाना आज़ाद ने, जो उस दिन भी राष्ट्रपति के न आने के कारण सभापतित्व कर रहे थे, दो बार मत-गणना के बाद इस प्रस्ताव के पास होने की घोषणा की। लेकिन घोषणा के सुनाये जाते ही पण्डाल में गड़बड़ मच गई। बंगाली प्रतिनिधियों में प्रस्ताव वापस लेने और कुछ ने मतविभाजन की माँग चिल्लाकर पेश की। सभापति मौलाना आज़ाद ने इस

भीषण गड़बड़ी में फिर मतग्रहण असम्भव देखकर दूसरे दिन इसी प्रस्ताव पर विषयसमिति में मत लेने की सूचना दी । इस पर बड़ा ही हल्ला मचा और क़रीब ५०० प्रतिनिधियों व दर्शकों ने मंच पर जाने का रास्ता घेर लिया । इनमें से अधिकतर बंगाली थे । 'इन्किलाब ज़िन्दाबाद', 'सुभास ज़िन्दाबाद,' 'शरत् ज़िन्दा बाद' के नारे लगाये जाने लगे । पं० जवाहरलाल नेहरू लोगों को मौ० आज़ाद की सूचना बताने और शान्त कराने के लिए कई बार उठे, लेकिन उत्तेजित प्रतिनिधियों व दर्शकों ने उन्हें भी बोलने नहीं दिया । बहुत से प्रतिनिधियों ने उन्हें भी घूँसे दिखाने शुरू किये । श्री शरत् चन्द्र बोस के समझाने पर बंगाली प्रतिनिधि शान्त हुए, लेकिन नेहरू जी ज्यों ही खड़े हुए, फिर गड़बड़ी शुरू हुई । करीब १।। घंटे की अशान्ति, होहल्ले और गड़बड़ी के बाद पण्डाल में यह घोषणा करने पर शान्ति स्थापित हुई कि श्री अणे अपना प्रस्ताव वापस ले लेंगे । श्रीअणे के प्रस्ताव वापस ले लेने से पहले पं० जवाहरलाल नेहरू ने एक अत्यन्त हृदयस्पर्शी और मार्मिक भाषण दिया । त्रिपुरी कांग्रेस के इतिहास में यह भाषण शायद सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण था । उनके लिए यह बिलकुल नया अनुभव था । उन्होंने कहा कि पिछले २५ साल से कांग्रेस से मेरा सम्बन्ध है, लेकिन ऐसा बुरा दृश्य मैंने कभी नहीं देखा । फिर भी मैं इसका स्वागत करता हूँ कि इससे कांग्रेस को स्पष्ट ज्ञात होजायगा कि वह कितने पानी में है । महात्मा गांधी ने काँग्रेस में अनुशासन, गम्भीरता और पवित्रीकरण के सम्बन्ध में जो लेख लिखे थे, उनका ज़िक्र करते हुए नेहरूजी ने कहा कि मैंने आज जो नज़ारा देखा है, उसके बाद मैं आनेवाले भीषण संग्राम की बात सोचकर सचमुच कांप उठता हूँ । हम निकट भविष्य में संग्राम की बातें सोचते हैं, हममें से कुछ ब्रिटिश साम्राज्यवाद को अल्टिमेटम देकर लड़ाई छेड़ने की बातें करते हैं, परन्तु क्या इसी तरह की उच्छृंखल और अनियंत्रित भीड़ को लेकर ब्रिटिश साम्राज्य से लड़ाई छेड़ेंगे ? कांग्रेस में सभी निर्णय बहुमत से हुआ करते हैं और श्रीअणे का प्रस्ताव भी बहुमत से तय हुआ था । मुट्ठी-भर प्रतिनिधि बहुमत के फ़ैसला कर देने के बाद कार्यवाही नहीं रोक सकते । यह प्रजातंत्र नहीं है, यह तो गुण्डापन है । यह फ़ासिज्म है, यह न तो समाजवाद है और न प्रजातन्त्र ।" कहते हैं कि पं० जवाहरलाल नेहरू द्वारा अबतक दिये हुए भाषणों में यह भाषण प्रभाव की दृष्टि से बहुत ऊँचा था । उन्होंने अपनी सारी मनोव्यथा उंड़ेल-सी दी थी । उनकी आवाज़ कभी दुःख से भर जाती थी, तो कभी उत्साह से पूर्ण हो जाती थी । श्रीअणे ने प्रस्ताव वापस ले लिया ।

पन्तजी का प्रस्ताव दूसरे दिन फिर पेश हुआ और बहुमत से पास होगया । सोशलिस्ट पार्टी के नेताओं पर बंगाली प्रतिनिधियों के अनुशासन-भंग का इतना

प्रभाव पड़ा कि उन्होंने पन्तजी के प्रस्ताव पर अपने संशोधन वापस ले लिये और तटस्थता स्वीकार कर ली।

राष्ट्रीय मांग

त्रिपुरी-कांग्रेस द्वारा अन्य जो महत्त्वपूर्ण प्रस्ताव स्वीकृत हुए, उनमें से राष्ट्रीय माँग का प्रस्ताव मुख्य था। इस लम्बे प्रस्ताव में आधी सदी से चलनेवाले भारतीय स्वातन्त्र्य संग्राम, फैडरल विधान की अस्वीकृति और स्वयं बनाये शासन विधान की ही एकमात्र स्वीकृति आदि का ज़िक्र करने के बाद कहा गया था :—"कांग्रेस की सम्मति है कि भारत की वर्तमान स्थिति, राष्ट्रीय आन्दोलन की संगठित शक्ति, जन- साधारण की उल्लेख योग्य जागृति, देसी रियासतों की प्रजा में नवीन जागृति और संसार की ज़ोरों से बदलती हुई हालत को देखते हुए भारतवर्ष के साथ आत्मनिर्णय के सिद्धान्त को लागू करने का समय आ गया है, ताकि भारतवासी राष्ट्रीय पंचायत (कंस्टिट्यूएण्ट असेम्बली) के द्वारा स्वतन्त्र प्रजातन्त्र राज्य क़ायम कर सकें। जन्मसिद्ध अधिकार और आत्मसम्मान के ख़याल से ही पूर्ण स्वाधीनता की मांग नहीं की जा रही, बल्कि इसलिए कि आर्थिक तथा जनतापर दबाव डालने वाली दूसरी समस्याएँ भी इसके बिना हल नही हो सकती। जबतक जनता को पूर्ण आत्मविकास और उन्नति का अवसर न मिले, जो सिर्फ़ स्वतन्त्रता के द्वारा ही प्राप्त हो सकता है, तबतक न तो भारत ग़रीबी से छुटकारा पा सकता है और न वह आधुनिक प्रगति में आगे बढ़ सकता है।

"प्रान्तीय स्वायत्त शासन में इस प्रकार के विकास के लिए कोई स्थान नही है और इसकी देश को लाभ पहुँचाने की शक्ति बहुत जल्दी खतम होती जा रही है। प्रस्तावित संघ-विधान भारत को और भी अधिक जकड़ता है और यह स्वीकार नहीं किया जा सकता। इसलिए कांग्रेस की यह दृढ़ सम्मति है कि सारे गवर्नमेण्ट आफ़ इण्डिया एक्ट की जगह भारतीय जनता द्वारा बनाया गया विधान ले ले।" इसी प्रस्ताव में आगे कहा गया था कि—"काँग्रेस के उद्देश्य की शीघ्र ही प्राप्ति को मद्देनज़र रखते हुए और सिरपर आने वाली राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय क्रान्ति का प्रभावकारी तौर पर मुकाबिला करने के विचार से यह कांग्रेस देश की सभी कांग्रेसी संस्थाओं, प्रान्तीय कांग्रेसी सरकारों तथा सर्वसाधारण जनता से अनुरोध करती है कि वे संगठित होकर और कांग्रेस को अधिक शक्तिशाली, पवित्र तथा संगठित बनाकर, इसकी कमज़ोरियाँ व अवांछनीय प्रभाव दूर करने में सहायता दे, ताकि यह लोकमत की प्रभावशाली संस्था बन सके।"

अन्य प्रस्ताव

काँग्रेस की आन्तरिक शुद्धि का प्रश्न त्रिपुरी के सामने उपस्थित प्रश्नों में सबसे महत्त्वपूर्ण था। पं जवाहरलाल नेहरू के शब्दों में यह कांग्रेस के जीवन-मरण का प्रश्न था। इस सम्बन्ध में एक प्रस्ताव द्वारा अखिल भारतीय कांग्रेस-कमेटी को कांग्रेस सदस्यों की भरती और चुनाव-संबंधी नियमों में सुधार करने, उचित उपाय काम में लाने और आवश्यक समझने पर कांग्रेस-विधान में उचित संशोधन करके उन्हें लागू करने का अधिकार दिया गया। एक प्रस्ताव में ब्रिटेन की अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति पर प्रजातंत्र से विश्वासघात, सामूहिक सुरक्षा की पद्धति की समाप्ति, जंगली हिंसा को उत्तेजन देने का आरोप लगाते हुए उसका विरोध किया गया था और कहा गया था कि "कांग्रेस घोषित करती है कि फ़ासिस्ट शक्तियों को बराबर सहायता देनेवाली तथा लोकतंत्र राष्ट्रों के नाश में सहायक होनेवाली ब्रिटिश नीति से हमारा कोई संबंध नहीं है। काँग्रेस साम्राज्यवाद और फ़ासिज्म दोनों के विरुद्ध है और उसका यह विश्वास है कि विश्व की शान्ति तथा उन्नति के लिए इन दोनों का अन्त कर दिया जाय। काँग्रेस की सम्मति में यह परम आवश्यक है कि भारतवर्ष एक स्वतंत्र देश की भांति अपनी वैदेशिक नीति का स्वयं संचालन करे और इस प्रकार साम्राज्यवाद और फ़ासिज्म से दूर रहकर शान्ति तथा स्वतंत्रता के मार्ग पर अग्रसर होता रहे।" देशी राज्यों का प्रश्न भी बहुत महत्त्वपूर्ण था। देसी रियासतों में होनेवाली अद्भुत जागृति का स्वागत और रियासती प्रजा की उत्तरदायी शासन व नागरिक अधिकारों की माँग के समर्थन और राजाओं की दमननीति के विरोध के बाद गाँधीजी के अनशनसमाप्ति पर संतोष प्रकट करते हुए इस प्रस्ताव में कहा गया था कि—"हरिपुरा काँग्रेस के रियासत-संबंधी प्रस्ताव से जो आशाएँ की गई थीं, वह पूरी हुई हैं और रियासती प्रजा को अपना संगठन करने व अपना स्वाधीनता-आन्दोलन स्वयं चलाने को प्रोत्साहित कर उसने अपना औचित्य सिद्ध कर दिया है। हरिपुरा की नीति रियासती प्रजा के हित में नियत की गई थी, ताकि उसमें स्वयं आत्मविश्वास और शक्ति उत्पन्न हो सके। परिस्थितियों के कारण काँग्रेस ने अपने पर कुछ पाबंदियां लगाई थीं, लेकिन इसे कभी अनिवार्य बंधन नहीं माना गया। काँग्रेस का सदा यह अधिकार तथा कर्तव्य रहा है कि वह रियासती प्रजाजनों का पथ-प्रदर्शन करे। रियासतों में होनेवाली महान् जागृति के कारण संभव है कि काँग्रेस ने अपने ऊपर जो पाबंदियाँ लगाई हैं, वे घट जावें या बिलकुल ही खतम हो जावें और इस प्रकार कांग्रेस तथा देशी राज्यों की प्रजा का आन्दोलन एक होता चला जाय। कांग्रेस फिर यह दोहरा देना चाहती है कि उसका पूर्ण स्वाधीनता का लक्ष्य सारे भारत के लिए है, जिसमें देशी रियासतें भी शामिल हैं

उन्हें भारत का अविभाज्य अंग होने के कारण अलग नहीं किया जा सकता । उन्हें भी उतनी राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक स्वतंत्रता का अधिकार है, जितना कि ब्रिटिश-भारत को ।"

इनके अतिरिक्त भी अन्य अनेक प्रस्ताव त्रिपुरी-कांग्रेस में पास हुए । मिश्री-प्रतिनिधि मण्डल के हार्दिक स्वागत, जापानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध वीरता-पूर्वक लड़ने के लिए चीनियों को बधाई तथा चीन में मैडिकल मिशन भेजने का समर्थन, प्रवासी भारतीयों के आन्दोलनों से सहानुभूति, फ़िलस्तीन में अरबों से सहानुभूति व ब्रिटिश सरकार की दमननीति की निन्दा, बिलोचिस्तान में उत्तरदायी शासन की मांग आदि प्रस्ताव भी स्वीकृत हुए। एक प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस-अधिवेशन की तारीख़ें दिसम्बर में नियत की गई, क्योंकि फ़रवरी या मार्च में प्रायः केन्द्रीय और प्रान्तीय असेम्बलियों के अधिवेशन होते हैं । यह भी निश्चय हुआ कि आगामी अधिवेशन बिहार में हो ।

तमाम अधिवेशन में राष्ट्रपति न आ सके । उनका स्वास्थ्य लगातार गिरता गया । इसलिए राष्ट्रपति के चित्र-का ही जलूस निकाला गया । फैज़पुर और हरिपुरा में बैलों के रथ पर जलूस निकले थे, तो त्रिपुरी में ५१ हाथी महाकौशल के अतीत गौरव का प्रतिनिधित्व करते हुए रथ खीच रहे थे, जिस पर राष्ट्रपति का चित्र रक्खा गया था । महाकौशल बम्बई-जैसा सम्पन्न प्रान्त नहीं, इसलिए हरिपुरा जैसा आडम्बर तो नही था, लेकिन प्रबन्ध सन्तोषजनक था। राष्ट्रपति बीमार होकर आये और बीमार ही गये । त्रिपुरी कांग्रेस के लिए, बहुत-से प्रस्ताव पेश होने की सूचना मिली थी, लेकिन वे पेश न किये जा सके। राष्ट्रपति ने थोड़े से ही उक्त प्रस्ताव पेश करने की आज्ञा दी ।

गांधीजी के नेतृत्व की विजय

त्रिपुरी अधिवेशन का काँग्रेस और भारतवर्ष के इतिहास में क्या स्थान रहेगा, यह कुछ समय बाद ही कहा जा सकेगा । लेकिन इतना अब भी निःसन्देह कहा जा सकता है कि त्रिपुरी कांग्रेस गांधीजी की व्यक्तिगत विजय थी । यों तो पिछले बीस सालों से वें काँग्रेस के अन्दर या बाहर रहकर उसका सूत्रसंचालन कर रहे थे लेकिन त्रिपुरी में उपस्थित प्रतिनिधियों ने इस प्रथापर क़ानूनी मुहर भी लगा दी । अबतक राष्ट्रपति को अपनी इच्छा से वर्किंग कमेटी के सदस्य चुनने का अधिकार था और इस प्रकार वह अपनी नीति को अमल में ला सकता था । यह ठीक है कि किसी राष्ट्रपति ने गांधीजी की सलाह लिए बिना वर्किंग कमेटी का

निर्माण नहीं किया था, लेकिन अब उसके लिए गाँधीजी की सलाह के अनुसार चलना अनिवार्य कर दिया गया। राष्ट्रपति चाहे कोई भी चुना जावे, त्रिपुरी काँग्रेस ने गांधीजी के नेतृत्व में ही देश की मुक्ति समझकर राष्ट्रपति को भी उन्हीं के परामर्श से चलने का आदेश दिया। गांधी, दरअसल भारत को परमात्मा की अपूर्व देन है, जो भारत की मुक्ति के लिए इस भूमिपर अवतरित हुई हैं। महात्माजी के काँग्रेस से अलग होने की संभावना ने उसमें से ज्यादातर को विचलित कर दिया था, जो उनकी नीति की आलोचना करते थे। इसलिए उन्होंने भी गांधीजी के नेतृत्व पर विश्वास प्रकट किया। त्रिपुरी कांग्रेस का यह शुभ परिणाम हुआ है कि कांग्रेसी सोशलिस्ट दक्षिणपक्षी या गांधीवादी नेताओं के अधिक निकट सम्पर्क में आ गये हैं। आशा है यह एकता राष्ट्र के लिए हितकर साबित होगी।

आन्तरिक संकट जारी

त्रिपुरी कांग्रेस ने देश में इस तरह की कोई स्फूर्ति पैदा नहीं की, जिस तरह पिछले कुछ सालों से कांग्रेस के अधिवेशन कर रहे थे। इसका मुख्य कारण था वही विवाद, जो त्रिपुरी में भीषण रूप में प्रकट हुआ था। अन्य अनेक प्रान्तों में भी कुछ इने गिने उग्र विचारक त्रिपुरी कांग्रेस की आलोचना कर रहे थे, लेकिन बंगाल ने तो सामूहिक रूप से त्रिपुरी कांग्रेस में उपस्थित गांधीवादी नेताओं की आलोचना तीव्र रूप से शुरू करदी। प्रान्तीयता के लिए बंगाल पहले से ही बदनाम है, इस अवसर पर उसमें प्रान्तीयता का भीषणता से प्रदर्शन किया। राष्ट्रपति सुभास बोस बीमारी की हालत में ही त्रिपुरी आये और उसी हालत में वापस गये। वे झरिया जाकर ठहर गये। कुछ अस्वास्थ्य और कुछ राजनैतिक मतभेद के कारण वे भी स्थिति को संभालने में असमर्थ ही रहे। वर्किंग कमेटी न बनने से त्रिपुरी कांग्रेस के प्रस्ताव बहुत समय तक अमल में नहीं आ सके। इसकी देश में तीव्र आलोचना होने लगी। सुभास बाबू ने स्थिति को शान्त करना चाहा, लेकिन उनके वक्तव्य से स्थिति ने और भी अवाँछनीय रूप धारण कर लिया। इस वक्तव्य में उन्होंने पन्तजी के प्रस्ताव को अवैधानिक बताया था और गांधीजी से पूछा था कि वे इस प्रस्ताव का कैसा अर्थ समझते हैं? वर्किंग कमेटी के निर्माण के संबंध में भी गांधीजी की राय पूछते हुए अपनी यह सम्मति दी थी कि यदि गांधीजी वर्किंग कमेटी को सिर्फ़ एक विचार या पार्टी से ही संगठित करना चाहते हैं और कांग्रेस के विभिन्न दलों की प्रतिनिधि संस्था बनाने को तैयार नहीं है, तो मेरे और पिछली वर्किंग कमेटी के अन्य सदस्यों में सहयोग की कोई गुंजायश नहीं है। दूसरे वक्तव्य में उन्होंने अपने विचारों का समर्थन करते हुए इस संदेह का प्रतिवाद किया था कि वे पन्तजी के प्रस्ताव पर अमल नहीं करेंगे,

गाँधीजी और सुभासबाबू में बहुत समय तक पत्र-व्यवहार जारी रहा, लेकिन इसका कोई नतीजा न निकल सका। राष्ट्रपति की बीमारी और महात्मा गांधी के राजकोट के संग्राम में व्यस्त रहने के कारण दोनों की मुलाक़ात भी बहुत समय तक न हो सकी। जब कलकत्ते में अ० भा० कांग्रेस कमेटी की बैठक के अवसर पर मुलाक़ात हुई, तब भी कोई लाभ न निकला। गांधीजी और सुभासबाबू के मतभेद बराबर बने रहे और अन्त में राष्ट्रपति को इस्तीफ़ा देना पड़ा।

राजकोट का महत्त्वपूर्ण निर्णय

इस अप्रिय प्रसंग को छोड़कर हमें एक दफ़ा फिर राजकोट की ओर चलना चाहिए। गांधीजी ने वायसराय की सलाह मानकर अनशन भंग कर दिया। वे राजकोट से रवाना होकर १५ मार्च को दिल्ली पहुँचे और वायसराय से मुलाक़ात की। दो एक दफ़ा बाद में भी मिले। ३ अप्रैल को फेडरल कोर्ट के चीफ़ जस्टिस मि० सर मारिस ग्वायर ने अपना चिरप्रतीक्षित फ़ैसला दे दिया। यह फ़ैसला सरासर गांधीजी के पक्ष में था। उनके फ़ैसले का सारांश यह था कि—यह स्पष्ट है, दोनों पार्टियों में (सरदार पटेल व ठाकुरसाहब) में एक समझौता हो चुका था। इसके अनुसार ठाकुरसाहब सरदार पटेल के सिफ़ारिशी नामों को सुधार कमिटी में स्वीकार करने के लिए वचनबद्ध हैं, बशर्ते कि वे नाम रियासत से बाहर के लोगों के न हों। यह सच है कि कमेटी के सदस्यों की नियुक्ति का अधिकार सिर्फ़ ठाकुरसाहब के हाथ में है, लेकिन वे सरदार पटेल द्वारा सिफ़ारिशी नामों में से ही सात को नियुक्त कर सकेंगे। कमेटी के सभापति के सम्बन्ध में भी सर मारिस ने फ़ैसला किया था। इसके अनुसार दस सदस्यों में से ही किसी को ठाकुरसाहब सभापति चुन सकते हैं न कि इनके अलावा ११वें को सभापति नियुक्त कर सकते हैं जैसाकि वे पीछे से कहने लगे थे। इस फ़ैसले के अनुसार राजकोट में जो सुधार कमेटी बनेगी, उसके सात सदस्य तो सरदार पटेल के सिफारिशी नामों में से रखे जावेंगे और तीन सदस्य ठाकुर खुद नियुक्त कर सकेगा।

रियासतों में सत्याग्रह स्थगित

इस फ़ैसले के बाद गांधीजी वायसराय से ४ अप्रैल को मिले, गाधीजी की वायसराय से मुलाक़ातों में क्या चर्चा हुई, यह अभी तक मालूम नहीं हुआ। लेकिन यह निश्चित-सा है कि राजकोट के अलावा अन्य रियासतों के सम्बन्ध में भी सामान्यतया उनकी चर्चा हुई। इन दिनों गांधीजी का समस्त ध्यान रियासतों की ओर लग रहा था। वे शायद संघ-विधान के आने से पूर्व सब रियासतों को भी ब्रिटिश

भारत के सतह पर लाने को उत्सुक थे। उन्होंने वक्तव्य प्रकाशित करके एक-एक करके सब रियासतों में होनेवाले सत्याग्रह बन्द करने की सलाह दी। इसके अनुसार जयपुर में ज़ोरों से चलनेवाला सत्याग्रह, मेवाड में शान्ति किन्तु दृढ़ता के साथ चलनेवाला सत्याग्रह, ट्रावनकोर में फिर नये उत्साह से चलनेवाला सत्याग्रह सब बन्द होगये। मानो, गांधीजी ने समस्त रियासतों की प्रजा का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लिया हो। उन्होंने एक वक्तव्य में आवश्यकता पड़ने पर स्वयं भी सत्याग्रह करने की संभावना प्रकट की। उन्होंने कहा कि इन दिनों सत्याग्रह बन्द रहने से भावी मार्ग निर्णय में मुझे बहुत बल मिलेगा। इस समय स्थिति यह है कि सभी रियासतों में सत्याग्रह बन्द है और रचनात्मक कार्यक्रम पर ज़ोर दिया जा रहा है, लेकिन अभी तक रियासतों में होनेवाला दमन बन्द नहीं हुआ।

गांधीजी की तीव्र इच्छा थी कि राजकोट में शासन-सुधार-समिति शीघ्र ही काम करने लगे और इसीलिए वे स्वयं राजकोट गये। उन्हें यह आशा थी कि सर मारिस ग्वायर के निर्णय और वायसराय के आश्वासन के बाद सुधारसमिति बनने में कोई देर नहीं लगेगी, लेकिन वहाँ अनेक कल्पनातीत भीषण बाधाएँ उपस्थित हुईं। ब्रिटिश भारत की प्रगति में बाधक साम्प्रदायिकता वहां भी मुसलमानों, भय्यतों और गिरासियों की साम्प्रदायिकता के रूप में अड़ंगा लगाने लगी। साम्प्रदायिकता ने वहाँ भीषण रूप धारण कर लिया। न ये लोग प्रजापरिषद् का साथ देने का वायदा करते थे और न मार्ग में से अलग होते थे। राजकोट के अधिकारी इस साम्प्रदायिकता के विष को बढ़ाने में कोई कसर न छोड़ रहे थे। दरबार वीरवाला ने गांधीजी के प्रत्येक समझौते की शर्त को ठुकरा दिया। अन्त में गाँधीजी ने उसके अन्तर की सत्प्रकृति पर विजय पाने के लिए सभी कुछ उसके हाथ में छोड़ दिया और 'मैं हारा, तुम जीते' कहकर वे १५ दिन की निरन्तर परन्तु असफल कोशिशों के बाद वापस आगये। उन्होंने सर मारिस ग्वायर के निर्णय का भी उपयोग न किया। राजकोट से लौटने पर उन्होंने जो वक्तव्य दिया, उससे ज्ञात होता है कि राजकोट के कुचक्रों ने उन्हें कितना निराश कर दिया था। अब भी राजकोट की प्रजा और अधिकारियों में समझौते की चर्चा चल रही है। गाँधीजी भी इसमें दिलचस्पी ले रहे हैं। इन पंक्तियों के लिखने तक समझौते की बात सफल नहीं हो सकी। बहुत संभव है कि गांधीजी वृन्दावन (चम्पारन) की गाँधी सेवा संघ की बैठक के बाद राजकोट फिर जावें और समझौते की बातचीत में भाग लें।

राष्ट्रपति का त्यागपत्र

गांधीजी राजकोट से रवाना होकर २७ अप्रैल को सीधे कलकत्ता पहुँचे। वहाँ

राष्ट्रपति से उनकी महत्त्वपूर्ण मुलाक़ात हुई । सरदार पटेल जानबूझ कर वहाँ नही गये । पं० जवाहरलाल नेहरू तथा पिछली वर्किंग कमेटी के अन्य सदस्यों से भी राष्ट्रपति की बातचीत हुई । गांधीजी का कहना था कि मैं राष्ट्रपति पर कोई ऐसी वर्किंग कमेटी लादना नहीं चाहता, जो उनकी इच्छा व नीति के विरुद्ध उनपर भारभूत हो। इसलिए पहले कार्यनीति के संबंध में पिछली कमेटी के सदस्यों से मिलकर एक निर्णय पर पहुँच जाना चाहिए। निरन्तर बातचीत और प्रयत्नों के बाद भी समझौते की कोई सूरत न निकल सकी। फलत: राष्ट्रपति ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया । पं० जवाहरलाल नेहरू ने एक प्रस्ताव द्वारा उनसे अपना त्यागपत्र वापस लेने की प्रार्थना की। राष्ट्रपति को यह भी आश्वासन दिया गया कि वर्किंग कमेटी में दो तीन सदस्य उनके विचारों के प्रतिनिधि भी रखे जा सकते हैं। लेकिन राष्ट्रपति न माने । यह देखकर पं० जवाहरलाल नेहरू ने अपना प्रस्ताव वापस ले लिया । नये राष्ट्रपति के लिए बाबू राजेन्द्रप्रसाद का नाम पेश हुआ और वही निर्विरोध राष्ट्रपति चुन लिये गये। इस अवसर पर अनेक बंगालियों ने फिर उद्दण्डता का परिचय दिया और राजेन्द्रबाबू तथा कुछ अन्य नेताओं के साथ दुर्व्यवहार भी किया। नये राष्ट्रपति ने उसी वर्किंग कमेटी को फिर घोषित किया। सिर्फ़ दो तीन महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हुए । पं० जवाहरलाल नेहरू ने देश के तथाकथित दक्षिण और वामपक्षों में एकता क़ायम करने के लिए बाहर ही रहना उचित समझा। श्रीसुभास व श्रीशरत बोस के इन्कार करने पर डा० विधानचंद्रराय और डा० प्रफुल्ल घोष को सदस्य बनाया गया । इस तरह कांग्रेस के उस आन्तरिक संकट का पटाक्षेप हुआ, जो राष्ट्रपति चुनाव से प्रारंभ हुआ था और सवा दो मास बाद फिर कांग्रेस का शासनसूत्र अपने पुराने सुपरीक्षित देशपूज्य महारथियों के हाथ में आगया । एक प्रस्ताव द्वारा कांग्रेस के विधान में परिवर्तन पर रिपोर्ट देने के लिए एक उपसमिति नियुक्त की गई और दूसरे प्रस्ताव द्वारा भावी युद्ध में ब्रिटेन का साथ न देने की फिर घोषणा की गई ।

यह आन्तरिक संकट समाप्त होगया, लेकिन इसका बीज नष्ट नहीं हुआ । अपने को उग्रवादी कहने वाले कुछ कांग्रेसियों ने कांग्रेस के अन्तर्गत फ़ारवर्ड ब्लाक, के नाम से एक नया दल संगठित किया है। श्रीसुभास बोस भी इस दल में सम्मिलित होगये हैं । संभव है कि पिछले राष्ट्रपति संकट में भिन्न-भिन्न कारणों से उनका साथ देनेवाले कुछ और लोग भी इस दल में सहयोग दें । लेकिन पिछले ४–५ सालों से संगठित कांग्रेस सोशलिस्ट पार्टी का जो वामपक्षियों की सबसे बड़ी संस्था है, सहयोग अबतक इसे प्राप्त नहीं हुआ है और इसलिए इसकी सफलता में काफ़ी सन्देह है। इस दल की नीति विचित्र है। यह दल गांधीजी के व्यक्तित्व पर श्रद्धा और उनकी नीति पर विश्वास प्रकट करता है, लेकिन साथ ही यह भी प्रकट करता है कि गांधीजी

की नीति पर विश्वास प्रकट करने का अर्थ 'हाई कमाण्ड'––सरदार पटेल, राजेन्द्र बाबू आदि वर्किंग कमेटी के पुराने सदस्यों पर विश्वास प्रकट करना नहीं है, मानो गांधीजी की नीति और हाई 'कमाण्ड' की नीति भिन्न-भिन्न हों।

कांग्रेस के सामने हिन्दू मुस्लिम-समस्या, रियासतों की पेचीदी समस्या, फैडरेशन का मुक़ाबला आदि अनेक महान् समस्याएं उपस्थित हैं। लेकिन इससे भी बड़ी समस्या उसके सामने है आन्तरिक दलबन्दी और अन्दरूनी गन्दगी की, जिसके कारण उसका समस्त प्रभाव और बल ही चले जाने की आशंका है। परन्तु राष्ट्र को तपस्वी राजनीतिज्ञ विश्वविभूति गांधीजी व उनके महारथियों की असंदिग्ध देश-भक्ति, दूरदर्शिता और व्यवहार-कुशलता पर पूर्ण विश्वास है। उनके नेतृत्व में राष्ट्र बीस सालों में ही सदियों आगे बढ़ गया है और आगे भी सब बाधाओं को पारकर बलवान होगा। मंगलमय भगवान् उन्हें चिरायुष्य दें।

६–५–३९

सस्ता साहित्य मण्डल
दिल्ली लखनऊ